हम कौन हैं

वृहद् छीपा समाज का गौरवशाली इतिहास

प्रकाशक :

अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति

अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा

अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति (रजि.)

महासभा के पास उपलब्ध दस्तावेजों के अनुसार अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति (रजि.) पूर्व में जांगड़ क्षत्रिय महासभा (1909 -1954),अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा (शूर समुदाय) (1955-1985),अखिल भारतीय श्रीनामदेव छीपा महासभा(1985-2 अगस्त 2021)तथा 2 अगस्त 2021 से अखिल भारतीय श्रीनामदेव छीपा महासभा समिति के नाम से कार्यरत है। राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, पंजाब, बिहार एवं आँध्रप्रदेश में इसकी प्रांतीय सभाएं कार्यरत हैं। यह संस्था समाज जीवन के 18 प्रमुख क्षेत्रों के साथ 18 प्रकोष्ठों की सहायता से संचालित है ।महासभा की एक त्रैमासिक पत्रिका विट्ठल नामदेव पत्रिका भी है। देश में समाज के कई मंदिर, छात्रावास, सहकारी समितियां भी कार्यरत है। इसका मुख्यालय कोटा, राजस्थान में हैं।

अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा (रजि.)

नामदेव टांक समाज की राष्ट्रीय संस्था अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा (रजि.) विगत 50 वर्षो से समाज सेवा व समाज उत्थान के कार्य में लगी हुई है। जिसका मुख्यालय संत नामदेव भवन, हीरा पथ, मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान में स्थित है। महासभा अपनी सहयोगी संस्था नामदेव टांक क्षत्रिय चैरिटेबल ट्रस्ट के माध्यम से विधवा सहायता, दिव्यांग सहायता, चिकित्सा सहायता, छात्रवृत्तिया, छात्रावास पुनर्भरण योजना, पुरस्कार योजना सहित समाज सहित समाज कल्याण की सभी योजनाएं भामाशाहों के सहयोग से संचालित करती है तथा प्रकाशन ट्रस्ट के माध्यम से मासिक पत्रिका विट्ठल संसार का प्रकाशन भी करती है ।

अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति (रजि.) एवं अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा (रजि.) दोनों महासभाएं मिलकर समाज की विभिन्न खान्पो के बीच एकता के कार्य में जुटी हुई हैं। दोनों महासभाओं द्वारा 16 दिसंबर से 22 दिसंबर 2021 तक जयपुर से पंढरपुर की यात्रा तथा जयपुर में संत शिरोमणि श्री नामदेव जी महाराज की 752 वीं जयंती के अवसर पर विशाल शोभा यात्रा सहित सामूहिक रूप से 4 से 10 नवंबर 2022 तक श्री नामदेव जयंती समारोह सप्ताह का आयोजन किया है। वर्तमान में राजस्थान व अन्य प्रान्तों में समाज के हितार्थ शासन से छपाई एवं सिलाई कला बोर्ड बनाने के कार्य में संलग्न है ।

हम कौन हैं – वृहद् छीपा समाज का गौरवशाली इतिहास

लेखक

प्रो.मोहन लाल छीपा

प्रकाशक : अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति

अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा

पुस्तक : **हम कौन है – वृहद् छीपा समाज का गौरवशाली इतिहास**

प्रथम संस्करण : फरवरी ,2023

© प्रो. मोहनलाल छीपा
मो. 9425018651

मूल्य : ₹ 50/–

प्रकाशक :

अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति
संत नामदेव आई.टी.आई. भवन, प्लॉट 1, सेक्टर 1, महावीर नगर विस्तार
कोटा (राजस्थान)–324005
मोबाईल नं. : 9425018651

अखिल भारतीय नामदेव टाँक क्षत्रिय महासभा
नामदेव भवन, हीरा पथ, सेक्टर–6, मानसरोवर, जयपुर
मोबाईल नं. : 9509338893

मुद्रकः

हरिहर प्रिन्टर्स, जयपुर

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विवरण	पुष्ठ संख्या
1.	**प्रस्तावना**	**2–5**
(i)	भारत की वर्ण व्यवस्था	
(ii)	हम मूलतः क्षत्रिय	
(iii)	छीपा एवं छपाई	
2.	**क्षत्रिय वर्ण से छीपा बनने का पौराणिक आरव्यान राजा शूरशेन के परिवार से बनी छीपा समाज की चार प्रमुख खांप**	**6–8**
3.	**वृहद् छीपा समाज**	**9–26**
(i)	छीपा/छीपी	
(ii)	दर्जी	
(iii)	भावसार	
(iv)	रंगारा छीपा	
4.	**संत नामदेव महाराज की जाति**	**27–32**
5.	**नामदेव महाराज पूज्यनीय क्यों ?**	**33**
6.	**छीपा जाति से धर्मातंरित मुस्लिम छीपा**	**34–36**
7.	**एकता हेतु प्रयास**	**37**

प्रकाशकीय

नामदेव समाज के समक्ष वृहद् छीपा समाज का इतिहास विषयक पुस्तक प्रस्तुत करते हुए हमें बहुत ही प्रसन्नता है । यह पुस्तक अखिल भारतीय नामदेव छीपा महासभा समिति एवं अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा द्वारा मिलकर मनाई गई संत शिरोमणि नामदेव जी महाराज की 752 वी जयंती का परिणाम है। दोनों महासभाओं द्वारा 16 दिसंबर से 22 दिसंबर 2021 तक जयपुर से पंढरपुर की यात्रा की गई थी। इस यात्रा में नामदेव समाज की कई खांपों के दर्शन हुए थे। खांपों से उनके इतिहास की जानकारी लेने का प्रयास किया गया परंतु विशेष सफलता नहीं मिली। इसलिए हमने तय किया कि यह जानकारी स्वयं अपने स्तर से एकत्रित कर लोगों को वृहत नामदेव समाज की संरचना से अवगत कराया जाए। पंढरपुर (महाराष्ट्र) में 19 दिसंबर 2021 ''हम कौन हैं'' विषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

वृहद् व एकात्म नामदेव समाज हम सबका सपना है । अलग अलग खांपों में विभाजित रहने के कारण, बड़ी जनसंख्या के होने के बावजूद भी हम देश में कोई राजनीतिक दबाव समूह नहीं बन सके ।परिणाम स्वरूप देश में, विकास के सभी आयामों में हम तुलनात्मक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं ।वर्षों से श्री नामदेव समाज में विभिन्न खांपों में एकता के प्रयास किए जा रहे हैं । धीरे धीरे कुछ खांपें एक–दूसरे के नजदीक आ भी रही हैं । कुछ खांपों में विवाह संबंध भी होने लगे हैं। परंतु बहुत कम सामाजिक कार्यकर्ताओं को जो एकता के प्रयास कर रहे हैं, एक दूसरी खांपों के संबंध में सही ऐतिहासिक जानकारी है। ऐतिहासिक समानता की जानकारी मिलने पर निश्चित रूप से मन, एकता के प्रयासों की ओर ज्यादा लगने लगेगा व एकता का महत्व भी समझ में आएगा । विभिन्न खांपों के इतिहास में कई जगह काफी समानता देखने को मिलती है परंतु अपना अलग अस्तित्व बनाये रखने की जो परंपरा चली आ रही है, उसके कारण अभी एकजुट नहीं हो पा रहे हैं।

आज हमारे वृहद् समाज के अंतर्गत गहलोत छीपा, टाँक/दर्जी/टाँक क्षत्रिय, रंगारा छीपा, बंधारा/ भावसार छीपा, शिम्पी, छिम्बा, रोहिल्ला, कोकुतस्थ, मेरु, छिपोल्लू , दामोदर जूना गुजराती, भरतवंशी ,भगत वंशी, पीपावंशी, ब्रहम खत्री, सिन्धी छीपा राजपूत छीपा, वैष्णव छीपा आदि शामिल हैं । संत शिरोमणि श्री नामदेवजी, श्री काकुत्स्थजी महाराज, श्री संत पीपाजी महाराज, माता हिंगलाज, श्री टेकचन्दजी महाराज, श्री महाराजा रणवीरसिंहजी रोहिला,भगतजी महाराज एवं महाराणा प्रताप आदि हमारे इष्टदेव हैं ।

अतः इस सम्बन्ध में कई स्रोतों से वृहद् छीपा समाज की जानकारी संकलित करआपके समक्ष प्रस्तुत की जा रही है। यह संकलित जानकारी केवल प्रारंभिक तैयारी है जिससे अन्य खांपें अपने इतिहास से समाज को परीचित कराये तथा इसमें कुछ संशोधन कर हमें मार्गदर्शन दे सके। अपेक्षा है दोनों महासभा द्वारा समाज की एकजुटता के लिए किये गए प्रयास पसंद आएंगे। इस संबंध में आप सभी के सुझावों का हम स्वागत करेंगे । इस पुस्तक में जो विचार है वह लेखक ने स्वयं विभिन्न स्त्रोतों से संकलित किये हैं। अन्य बंधु इन विचारों को आगे बढ़ा सकते हैं।

प्रो. मोहनलाल छीपा
अध्यक्ष
अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा सहासभा समिति
मो. : 9425018651

अनुराग रूणवाल
अध्यक्ष
अखिल भारतीय नामदेव टाँक क्षत्रिय महासभा
मो. : 9509338893

1. प्रस्तावना

आजकल अपने समाज में सभी संस्थाओं के सामूहिक प्रयास से जागृति आ रही है। समाजसेवी स्थानीय स्तर से बाहर निकलकर देश के अन्य भागों में समाज को ढूंढने लगे हैं। अन्य स्थानों पर जाते हैं तो समाज की अलग–अलग खान्पों में विभाजित होने की जानकारी मिलती है। यदि कोई समाज विभिन्न खान्पों में विभाजित हो तो वह राजनीतिक दृष्टि से एक दबाव समूह नहीं बन सकता। समाज के अलग–अलग खान्पों में बटे होने के कारण न केवल राजनीतिक लाभों से वंचित रहते हैं बल्कि सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक उन्नति में भी बाधा आती है। अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति ने राष्ट्रीय स्तर पर अलग–अलग खान्पों से कुछ जानकारी लेने का प्रयास किया परंतु कोई उत्साहजनक परिणाम प्राप्त नहीं हुए। ''हम कौन हैं'' विषयक संगोष्ठी का भी आयोजन किया परंतु ज्यादा जानकारी नहीं मिल सकी। अतः अपने स्तर पर ही जानकारी प्राप्त करने का निश्चय किया गया । प्रत्येक राष्ट्र, समाज व परिवार के लिए आवश्यक है कि वह अपनी जड़ों को पहचानें , अपने अतीत को जानें । बिना अतीत को जाने आगे नहीं बढ़ा जा सकता। अतः प्रत्येक समाजसेवी के लिए जरूरी है कि वह यह जाने कि उसके समाज का इतिहास क्या रहा है, उसकी उत्पत्ति कैसे हुई है, वर्तमान अवस्था में वह कैसे पहुंचा तथा उसके समाज की ज्वलंत समस्याऐं क्या हैं?

विकसित समाजों के इतिहास की जानकारी तो आपको शोध पुस्तकों से प्राप्त हो जाती है, क्यों कि शोधार्थी अपने आप उन पर शोध करते रहते हैं। परंतु हमारे समाज के इतिहास की जानकारी के लिए कोई प्रमाणिक शोध पुस्तक नहीं है। कुछ जानकारी भाट /बडवों की पोथियों से मिल जाती है तो उसी से काम चला लेते हैं। भाट /बडवों के समाज में निष्क्रिय होने के कारण वे भी पूरी जानकारी नहीं दे पाते। इसलिए यह प्रयास किया गया है कि जो कुछ जानकारी अलग–अलग स्रोतों से मिलती है पहले उसे एकत्र की जाए। तथा उसे समाज के भावी जागरूक शोधार्थियों के समक्ष प्रस्तुत की जाए। जो इस कार्य को आगे बढ़ा कर सही निष्कर्ष प्रस्तुत कर सके। वर्तमान में इस लेख में भाट /बडवों की पोथियों से मिली जानकारी, विभिन्न खान्पों द्वारा दी गई सूचना, इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर व्यक्तिगत स्तर पर समाज के इतिहास को संकलित करने का प्रयास किया है। जागरूक समाजसेवियों व समाज के शोधार्थियों से आग्रह है कि वे लेख का विश्लेषण करने तथा नए तथ्य जोड़ने का प्रयास करें जिससे कि धीरे–धीरे समाज को प्रमाणिक इतिहास प्राप्त हो सके ।

i) भारत की वर्ण व्यवस्था

वर्ण व्यवस्था एवं जाति व्यवस्था भारत की पुरानी सामाजिक संस्थाएं हैं। वर्ण व्यवस्था हमारे प्राचीन ऋषियों ,मुनियों की देन है ।श्रीमद्भगवतगीता में भगवान कृष्ण ने वर्ण व्यवस्था को कर्म एवं गुण के आधार पर उसकी रचना का उल्लेख किया है –

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।

तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ।। गीता।।4–13।।

ब्राम्हणक्षत्रियविन्षा शुद्राणम च परंतप।

कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणे: ।। गीता।।18–41।।

अर्थात ब्राह्मण, क्षत्रिय , वैश्य एवं शूद्र का विभाजन व्यक्ति के कर्म और गुणों के हिसाब से होता है, न कि जन्म के। गीता में भगवन श्री कृष्ण ने और अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है कि वर्णों की व्यवस्था जन्म के आधार पर नहीं, कर्म के आधार पर होती है. लेकिन धीरे–धीरे यह व्यवस्था समाप्त हो गयी और जन्म से वर्ण व्यवस्था आ गयी।प्रत्येक वर्ण में अनेक जाति –उपजाति बन गयी और सामाजिक व्यवस्था में काफी जटिलताएँ उत्पन्न हो गयी ।

ii)हम मूलतः क्षत्रिय

हम मूलतः क्षत्रिय थे। रंगाई ,छपाई ,सिलाई एवं बंधाई (बंधेज) हमारा कर्म था, परंतु जन्म के आधार पर जाति बन जाने से हम छीपा ,दर्जी ,रँगारा एवं बंधारा(भावसार) जाति के हो गए ।इसके आगे छीपाओं में भी गहलोत छीपा ,टांक छीपा ,भावसार छीपा ,रँगारा छीपा, वैष्णव छीपा, राजपूत छीपा, गोहिल क्षत्रिय छीपी, मुस्लिम छीपा, सिंधी छीपा, सिखछिम्बा, खत्री (ब्रह्म खत्री) हो गए। दर्जियों में टाँक, दर्जी ,शिंपी(नामदेव शिम्पी, वैष्णव शिंपी, अहीरशिंपी,तेलगु शिंपी,मेरु शिंपी), रोहिल्ला टांक दर्जी, मेरु, छिपोल्लू, पीपावंशी दर्जी , काकुत्स्थदर्जी, दामोदर जूना गुजराती दर्जी, भरतवंशी दर्जी .भगतवंशी दर्जी ,पटवा दर्जी नामदेव उडिया दर्जी, कन्नड दर्जी हो गये।

मूल रूप से क्षत्रिय होने के कारण परंतु अभी क्षत्रिय कर्म नहीं होने के बावजूद भी नाम के साथ क्षत्रिय ,राजपूत और ठाकुर लगाने का हमारा मोह नहीं छूटा ।जाति व्यवस्था की जटिलता के कारण आपस में एक दूसरे को नीचा समझने लगे ,रोटी–बेटी के मतभेद बढ़ते गए । एक दूसरे से दूर होते गए तथा यह विशाल वट वृक्ष कई स्वतंत्र शाखाओं में विभाजित हो गया ।स्वतंत्रता प्राप्ति के 75 वर्ष बाद भी हम अधिक संख्या में होने के बावजूद भी देश में राजनीतिक दबाव समूह नहीं बन पाये ।

विडंबना यह है कि खांपे तो बहुत सारी है परन्तु सही इतिहास की जानकारी किसी को भी नहीं हैं। प्रत्येक रवांप के प्रमुख पदाधिकारीयों से जब चर्चा की जाती है तो प्रारंभ में तो

थोड़ी जानकारी देते हैं परंतु जब कुछ आधारों पर तर्क किया जाता है तो वे आगे वार्ता नहीं करते। सबके पास बहुत हल्की जानकारी है। इसलिए अभी विभिन्न खांपों के सम्बंध में जो जानकारी मिल रही है उसको संकलित कर रहे है तथा समाज के चिंतनशील लोगों के समक्ष उसको रख रहे है। यह उनका कार्य है कि इस संकलित सामग्री को पढ़े तथा उस पर चिंतन करें तथा इस सम्बंध में सुझाव दें कि इन विभिन्न खांपों को कितना न्यूनतम किया जा सकता है।

मेरे विचार से यदि व्यवसायिक आधार पर विभाजन करें तो हमारे समाज के 4 प्रमुख कार्य रहे हैं रंगाई, छपाई, सिलाई तथा बंधेज। इसलिए छीपा, दर्जी, रंगारा व बंधारा या भावसार चार खांप हुई। इनको हिंदू व मुस्लिम में पुनः विभाजित किया जा सकता है जैसे हिंदू रंगरेज व मुस्लिम रंग रेज, हिंदू बंधारा व मुस्लिम बंधारा। यदि समाज के आराध्य महापुरूष/संत के अनुयायी के रूप में विभाजन करें तो सारी व्यावसायिक खांपे इन महापुरूषों के अनुयायियों के रूप में विभाजित हो जायेगी। जैसे नामदेव समाज में सभी छीपा, दर्जी, रंगारा, बंधारा शामिल होगे जो संत नामदेव को मानते हैं। इस दृष्टि से इनमें सभी छीपा, दर्जी, शिंपी लोग शामिल हो जायेगे। उसी प्रकार अन्य संतो/महापुरूषों के नाम में बने समाज में उनके अनुयायी शामिल होंगे।

iii) छीपा एवं रंगाई, छपाई, सिलाई, बंधेज

हमारे प्राचीन ग्रंथों में चित्रलेखा, चित्रांगदा, रंगशाला, आदि शब्दों का प्रयोग यह सूचित करता है कि अलंकारिता की दृष्टि से रंगों का प्रयोग भारत में अत्यंत पुराना है। वस्त्र की बुनाई करते समय रंगीन सूत द्वारा नाना प्रकार के रंगबिरंगे चित्र बनाए जाते थे। इसके उपरांत उसे छपाई द्वारा रंगबिरंगे चित्रों से सँवारा जाता था। प्लिनी (Pliny) के अनुसार रंगाई, छपाई का जन्म भारत से होकर मिस्र आदि देशों में ईसा पूर्व प्रसारित हो चुका था। छीपा' शब्द का इतिहास उतना ही पुराना है जितनी रंगाई ,छपाई ,चुंदरी , बंधेज आदि का व्यवसाय। छपाई का सम्बंध रंगाई, बंधेज सिलाई आदि सभी क्रियाओं से हैं। प्रारंभ में सभी कार्य एक ही इकाई में संपादित होते थे। धीरे–धीरे विशिष्टीकरण के कारण अलग–अलग प्रक्रियाएं हो गयी। आज हम हमारे प्राचीन सूचना के स्त्रोत भाटों की पोथियाँ तथा किवदन्तियाँ पर विचार करे तो पहले छीपा शब्द जुड़ा रहता है। जब आपस में पूछते हैं कि आप कौन? तो जवाब मिलता था छीपा या छीपा–दर्जी या रंगारा छीपा या भावसार छीपा या गहलोत छीपा या टाँक छीपा। हमारी प्राचीन धर्मशाला/मंदिर पुष्कर पर लिखा है छीपा–दर्जीयान मंदिर। इस प्रकार प्रारंभ में हम 'छीपा' के नाम से जान जाते थे परंतु जब कार्य सिलाई का करने से दर्जी–छीपा हो गये, रंगाई का करने से रंगारा छीपा को गये, बंधेज का करने से बंधारा छीपा या भावसार छीपा हो गये। छपाई का संबंध सिंधु घाटी की सभ्यता से ही पाया गया है। जब से छपाई तथा छपे हुए कपड़े के व्यापार का धंधा हमारी जाति ने अपने

हाथ में लिया तब से वह समस्त भारतवर्ष में फला–फूला और विकसित हुआ है । यहां तक कि प्राचीन काल में छपा हुआ कपड़ा बड़ी ऊंची कीमतों पर भारतवर्ष से बाहर दूसरे देशों को भी भेजा जाता था। यही कारण है कि कपड़े की छपाई तथा उसके व्यापार से संबंधित जाति के रूप में हमें प्राचीन एवं मध्यकाल तक प्राय: सभी राज्यों, गणराज्यों , तथा बस्तियों में जाना गया तथा हमें आदर सम्मान के साथ बसाया गया। हम ऊंची सामाजिक स्थिति ,आर्थिक समृद्धि तथा सांस्कृतिक विशेषताओं के कारण अनेक स्थानो पर हमारे गण (रिपब्लिक) स्थापित हो गए तथा हमारी पृथक किंतु मान्य व्यापारिक श्रेणियां बन गई। छपाई कला से जुड़े हुए हम लोग सेठ ,महाजन, भक्तजन इत्यादि के रूप में जाने गए। वस्तुतः,छीपा जाति के शानदार अतीत, आर्थिक वैभव तथा सामाजिक प्रतिष्ठा के विषय में व्यापक अध्ययन, शोध तथा ऐतिहासिक खोज किये जाने की आज की आवश्यकता है। यह कठिन कार्य है क्योंकि राजनीतिक उथल–पुथल, भारत में मुगलों के शासन,उच्च जातियों की अहमन्यता, औद्योगिक क्रांति के कारण मशीनों का आगमन आदि कारणो से उक्त कला, व्यवसाय तथा व्यापार में निरंतर गिरावट होती गयी ।

इस विषय में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि छपाई, रंगाई, सिलाई, बंधेज तथा छपे वस्त्रों का व्यापार,हमारा धंधा अथवा आजीविका का माध्यम था,हमारा कर्म था, न कि वर्ण अथवा जाति का द्योतक । हम मूलतः क्षत्रिय थे तथा शासन करते थे,जिन्होंने कालांतर में वैश्य वृत्ति को आजीविका (कर्म) के रूप में ,भगवत भक्ति को धर्म एवं आस्था के रूप में अपना लिया। वर्णाश्रम प्रथा से बंधे हुए होने के कारण हम लोग उसी व्यवस्था को अपनाते रहे। आज भी हम उसी सनातन वैष्णव धर्म का भक्ति भाव के साथ पालन कर रहे हैं।

■■■■

2. क्षत्रिय वर्ण से छीपा बनने का पौराणिक आख्यान

इस वर्ण(जाति) परिवर्तन का आख्यान यह है कि हम हैयय वंश के सहस्त्रबाहु महाराज के परिवार से निकले हैं। हैयय पुराणों में वर्णित भारत का एक प्राचीन राजवंश था ।इसके सर्वाधिक सम्मानीय राजा सहस्तार्जुन या सहस्त्रबाहु थे ।वह रावण से भी अधिक शक्तिशाली राजा थे । सहस्त्रबाहु राजा कृतवीर्य के पुत्र थे जो हैहय वंश के राजा थे। उनकी एक सहस्र (एक हजार) भुजाएँ थीं, जिसके कारण इन्हें सहस्रार्जुन भी कहते हैं। वे भगवान दत्तात्रेय के परम भक्त थे।राजा बनने के पश्चात उनका पृथ्वी के कई महान योद्धाओं से युद्ध हुआ था ।अपने समय में सहस्त्रबाहु अत्यधिक शक्तिशाली तथा पराक्रमी राजा था जिसनें तीनों लोकों के राजा रावण को भी पराजित कर दिया था और उसे अपने कारावास में बंदी बनाकर रखा था । लेकिन उनकी एक गलती भगवान परशुराम के द्वारा उनके संपूर्ण वंश के नाश का कारण बनी।

महाराजा सहस्त्रबाहु की पत्नी रानी सत्यवती एवं जमदग्नि ऋषि(परशुरामजी के पिता) की पत्नी रेणुका सगी बहने थी। एक समय महाराज सहस्त्रबाहु ने सपत्नीक सेना सहित दक्षिण दिशा में महिष्मति नदी के किनारे विश्राम के लिए पड़ाव डाला। वहां पर जमदग्नि ऋषि का आश्रम था। संयोगवश नदीके तट पर सत्यवती और रेणुका का मिलन हो गया। वार्तालाप में रानी सत्यवती ने अपनी बड़ी बहन रेणुका से अभिमान भरे शब्दों में कह दिया कि काश,आप एक राजा की रानी होती तो आज मुझे सेना सहित आदर सत्कार देकर कृतार्थ करती। इस बात से रेणुका के मन में ग्लानि हुई। वह उदास मन से आश्रम में चली गई। महर्षि जमदग्नि परम ज्ञानी थे। रेणुका के चेहरे पर छाई उदासी देखकर उन्होंने सारा वृत्तांत जान लिया। उसकी व्यथा को दूर करने के लिए महर्षि जमदग्नि इंद्र के पास गये तथा कुछ समय के लिए कामधेनु तथा कुबेर का भंडार मांग लाये ताकि सेना सहित अतिथियों का सत्कार किया जा सके। उनके सहारे महर्षि ने महाराजा सहस्त्रबाहु, सत्यवती तथा सेना समेत सभी का शानदार ढंग से आतिथ्य सत्कार किया, जिसे देख कर सभी आश्चर्य में पड़ गए,किंतु महाराजा सहस्त्रबाहु को उस कामधेनु को प्राप्त करने का लोभ हो गया, जिसके कारण ही तपोवन में इतने लोगों का राजसी सत्कार संभव हुआ। उन्होंने महर्षि जमदग्नि से कामधेनु मांगी,किंतु वह तो तपस्या के फल से इंद्र से कुछ समय के लिए मांगी हुई वस्तु थी। अत: महर्षि जमदग्नि ने यह वस्तु सहस्त्रबाहु को देने में असमर्थता व्यक्त कर दी।

कामधेनु नहीं देने पर क्रोधांधवश महाराज सहस्त्रबाहु ने महर्षि जमदग्नि का सिर धड़ से अलग कर कामधेनु लेकर चले गए। अहंकार, लोभ तथा किन्ही के बहकावे में आकर यह घृणित कार्य किया गया। इस प्रकार पति के मारे जाने पर माता रेणुका के दारुण विलाप को सुनकर जमदग्नि ऋषि के पुत्र महाप्रतापी परशुराम हिमालय में तपस्यारत स्थिति से उठकर तत्काल माता रेणुका के समक्ष प्रकट हो गए, अपनी योग माया से समस्त प्रकरण को समझ

कर अपनी माता के समक्ष प्रण किया कि मैं सहस्त्रबाहु के क्षत्रिय वंश का ही नाश कर दूंगा। भगवान परशुराम जी ने यही किया। जब महाराज सहस्त्रबाहु का सेना सहित संहार हो गया तब सहस्त्रबाहु के एक पुत्र शूरसेन व शूरसेन की तीन रानियाँ गोलोतिमा, विंदावती, राधवती व उनके चार पुत्र कृष्णादित्य,कमलादित्य , रंगादित्य एवं बुधादित्य शेष रहे थे। उस समय उन्होंने माता लाच्छी (हिंगलाज /जगदंबा) के मंदिर में जाकर प्राण रक्षा के लिए शरण ली।माता लाच्छी(हिंगलाज/ जगदंबा) ने शूरसेन व उनके पुत्रों को आदेश दिया कि अपनी आजीविका के लिए क्षत्रिय धर्म छोडकर वस्त्रों की रंगाई, छपाई,सिलाई ,बंधाई तथा उनके व्यापार को अपनाते हुए भक्तिमार्गी सनातन वैष्णव धर्म को अपनाओ। यह आदेश देखकर माता अंतर्ध्यान हो गई।

तत्पश्चात परशुराम जी वहां माता हिंगलाज के मंदिर पर पहुंच गए और महाराज शूरसेन को युद्ध के लिए ललकारा। प्राण रक्षा हेतु शूरसेन जी विनययुक्त शब्दों में बोले कि महाराज परशुराम जी आप ब्राह्मण है तथा हम क्षत्रिय । हमारे लिए आप से युद्ध करना उचित नहीं है ।इस पर परशुराम जी को अपने ब्राह्मण एवं तपस्वी होने का ध्यान आ गया। उन्होंने माता हिंगलाज के शरणागत पिता –पुत्रों व रानियों को प्राणदान देते हुए यह वचन ले लिया कि वे अब वे क्षात्र– धर्म त्याग देंगे और भविष्य में वैश्य, वाणिज्य एवं शिल्प कर्म ही करेंगे तथा भगवत भजन में लीन रहते हुए वैष्णव धर्म का पालन करेंगे।

माता हिंगलाज के आदेश पर शूरसेन जी ने अग्नि, जल, और सूर्य को साक्षी मानकर प्रतिज्ञा की कि आज से वह कपड़े को रंगना,छापना , बंधेज एवं सिलाई करने का व्यवसाय प्रारंभ करेंगे ।माता ने कहा कि इस कार्य के करने से वैश्य वर्ण के लोगों में तुम्हारा सम्मान होगा ।वैश्य वर्ण के कार्य के साथ भगवान नारायण का स्मरण करना ,तिलक लगाना और गले में कंठी धारण कर वैष्णव धर्म अपनाना ।इससे वैश्य एवं वैश्य लोगों में आपकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। वैश्य लोग आपको बराबर का सम्मान देंगे । यह छीपा जाति का त्रेतायुग का इतिहास है । इस प्रकार शूरसेन जी से छीपा जाति का वंश चला है ।

इस प्रकार हमारी जाति क्षत्रीय से वैश्य एवं भक्ति मार्गी बन गई। शूरसेन की चारो संतानों ने अपने वचन के अनुसार वैश्य कर्म एवं भक्ति धर्म अपनाया और उनके वंशज आज तक किसी न किसी प्रकार छपाई,सिलाई ,रंगाई ,बंधाई(बंधेज)कार्य व नाम से जुड़े हुए हैं ।

शूरसेन जी के परिवार से बनी छीपा समाज की चार प्रमुख खांप (छीपा,दर्जी,रंगारा एवं भावसार)

गहलोत छीपा समाज के भाट श्री जब्बर सिंह द्वारा उपलब्ध कराये गए विक्रम संवत 1965 तदनुसार ईस्वी सन 1908 के भाट मुकुन्दराम के दस्तावेज के अनुसार महाराज शूरसेन जी के तीन रानियां थीं प्रथम,गोलोतिमा,द्वितीय बिंदावती एवं तृतीय राधावती ।

गोलोतिमा नाम की रानी से कृष्णादित्य व कमलादित्य दो पुत्र थे । दूसरी रानी बिन्दावती से बुद्धादित्य का जन्म हुआ व तीसरी रानी राधावती से रंगादित्य का जन्म हुआ ।शूरसेन के चार पुत्रों से चार खांप प्रकट हुई।

शूरसेनजी की बड़ी रानी गोलोतिमासे कृष्णादित्य और कमलादित्य नाम से पुत्र हुए।कृष्णादित्य से माँ के नाम के कारण गोलोत छीपा (गहलोत,गोहिल व गोला)खांप प्रकट हुई ।कृष्णादित्य ने वस्त्र छपाई का कार्य आरम्भ किया। इसमें 485 गोत्र हैं ।

छोटे पुत्र कमलादित्यके टंकाणा गांव में रहने के कारण टांक छीपा/टांक दर्जी खांप प्रकट हुई।कमलादित्य ने वस्त्र सिलाई का कार्य आरम्भ किया । जिनके गोत्र 72 हैं ।

राधावती माता के पुत्र रंगादित्य के नाम से रंगारा छीपा खांप प्रकट हुई। रंगादित्य ने वस्त्र रंगाई का कार्य आरम्भ किया। उनके गोत्र 84 हैं।

बिन्दावती माता से पुत्र बुद्धादित्य के नाम से बंधारा खांप प्रकट हुई,इनके 160 गोत्र हैं।बुद्धादित्य ने वस्त्र बंधेज (टाई एवं डाई) का कार्य आरम्भ किया ।इनके भावनगर में रहने से इनको भावसार भी कहते हैं ।

■■■■

3. वृहद छीपा समाज

जब महाराज सहस्त्रबाहु का सेना सहित संहार हो गया, उस समय उनके पुत्र शूरसेन व उनके चार पुत्र कृष्णादित्य,कमलादित्य, रंगादित्य एवं बुधादित्य शेष रहे थे।इन चारों पुत्रों से आगे बढ़े वंश को निम्न खांपों के रूप में जाना जाने लगा –

1. छीपा/छीपी

हमारे भाट स्वर्गीय श्री रामेश्वर के अनुसार शूरसेन जी ने गढ़ गाँव गुहलाना में निवास किया तथा इसी कारण यहीं से गहलोत खाँप का प्रचलन हुआ। यहीं से सर्वप्रथम रंगाई छपाई का व्यवसाय प्रारंभ हुआ तथा रंगे – छपे वस्त्रोंका व्यापार किया गया। छीपा खांप गहलोत, गोहिल, गुहिल, या ढूंढारीभाषा में गोला छीपा, आदि नामों से जानी जाती हैं । भाट मुकुन्दराम के अनुसार शूरसेनजी की बड़ी रानी गोलोतिमा के बड़े पुत्र कृष्णादित्य थे उन्होंने कपड़े पर छपाई का कार्य प्रारंभ किया ।समाज के कुछ भाटों का कहना है कि माताके नाम से गोलोत /गहलोत /गोला खांप नाम से प्रसिद्ध हुई ।

इस खांप में आगे दो भेद हो गये हैं, मारवाड भूमिके रहने वाले जिनकी महिलाओं के हाथीदांत का चूडा पहनने के कारण मारु गोलोत(गहलोत)तथा मारवाड़ के बाहर रहने वाले गहलोत ,गोहिल ,गोला छीपा /छीपी खांप प्रसिद्ध हुई। मारु गोलोत(गहलोत) खांप के गोत्र 285 है तथा गहलोत खांप के 485 है । मारु गोलोत(गहलोत) खांप से 13 गोत्र जो नागौर के रहने वालों को मुसलमान बादशाह फिरोजशाह तुगलक ने ईस्लाम धर्म में धर्मान्तरित कर दिया। वे 13 गोत्र तुरक्या छीपा/मुस्लिम छीपा खांप के नाम से प्रसिद्ध हुए ।स्व.मोतीलाल बड़वा/भाटके अनुसार 16 अप्रैल 1353 को नागौर (राजस्थान)के छीपा समाज के 13 गोत्र को दिल्ली के बादशाह फिरोजशाह तुगलक ने मुस्लिम धर्म स्वीकार करवाया। इन गोत्रों में टांक, मोलानी, देवड़ा, चौहान, भाटी प्रमुख थे। मुस्लिम छीपा (तुरक्या छीपा) तब से वे 16 अप्रैल को ''छीपा दिवस'' के रूप में मनाते हैं ।राजस्थान में मुस्लिम छीपा महासभा नाम की संस्था कार्यरत है ।

गहलोत खांप के भाट स्व.श्री रामेश्वर ने 2022 चैत्र सुदी 2 संवत को 485 गोत्रों की गोत्रावली प्रकाशित की है ।

गहलोत छीपा राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब ,मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र ,बिहार, गुजरात, तमिलनाडु में काफी संख्या में है । छीपा समाज की अखिल भारतीय संस्था अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति है मारू गहलोत छीपा समाज की संस्था श्री नामदेव समाज, जोधपुर जो पंजीकृत संस्थाएं हैं। गहलोत छीपा संत शिरोमणि श्री नामदेव महाराज को अपना आराध्य मानते हैं ।कुछ लोग संत नामदेव को अपना वंशज भी मानते हैं क्यों कि संत नामदेव का जन्म छीपा समाज में ही हुआ था जिसकी जानकारी आगे

दी गयी है ।छीपा /छीपी खांप से जुडी अन्य खान्पे निम्न प्रकार है ।

i) सिख छीपा(छिम्बा)

संत नामदेव के जीवन के बीस वर्ष पंजाब में भगवत धर्म का प्रचार करते हुए बीते, वे करताल और एक तारा बजाते हुए मधुर स्वर में भजन गाते थे तथा ईश्वर की भक्ति करते थे। पंजाब की संत परम्परा में नामदेव प्रथम संत कहे जाते हैं। पंजाब में नामदेव जी का प्रभाव इतना अधिक था कि श्री गुरुग्रन्थ साहिब में उनके 61 पद, 3 श्लोक और 18 रागों को स्थान दिया गया। उनके नाम से घुमाण में एक गुरुद्वारा भी है।

उनसे प्रभावित होकर कई सिख बंधु नामदेवजी के भक्त हो गए ।पंजाब में वे अपने आप को छिम्बा लिखते हैं तथा रंगाई छपाई के कार्य से जुड़े रहे ।पंजाब के अतिरिक्त हरियाणा व हिमाचल प्रदेश में छिम्बा समाज बन्धु रहते हैं ।

भाई मोहकम सिंह छीपा (1663–1705) सिख परंपरा में मूल पंज प्यारे या पांच प्यारे में से एक थे। वह गुजरात में द्वारका के एक कैलिको प्रिंटर(छीपा) / दर्जी तीरथ चंद के पुत्र थे। वर्ष 1685 में, वह आनंदपुर आए, फिर गुरु गोबिंद सिंह के साथ उन्होंने मार्शल आर्ट का अभ्यास किया और आसपास के पहाड़ी प्रमुखों और शाही सैनिकों के साथ सिखों की लड़ाई में भाग लिया। वह उन पांचों में से एक थे जिन्होंने 1699 के बैसाखी के दिन गुरु गोबिंद सिंह के आह्वान के जवाब में अपना सिर चढ़ाया और पंज प्यारे की उपाधि अर्जित की। मोहकम सिंह के जन्म स्थान बेट द्वारिका में उनके नाम से गुरुद्वारा बना है ।

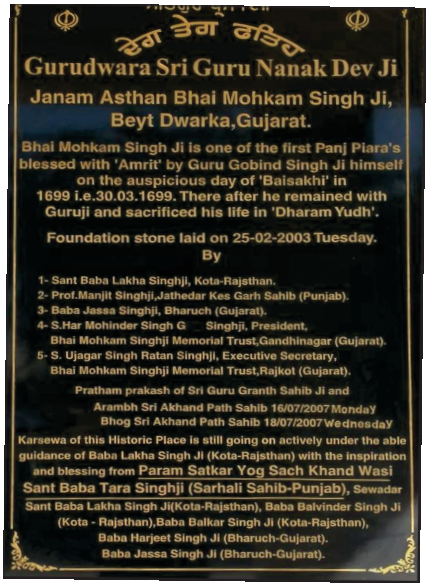

ii) सिंधी छीपा–

सिंध के मूल निवासियों को सिंधी कहते हैं। 1947 में भारत पाकिस्तान के बंटवारे के बाद सिंध के अधिकांश हिंदू और सिख भारत आकर बस गए। जो सिंधी भारत आकर छपाई का कार्य करते हैं उन्हें सिंधी छीपा कहते हैं।यह लोग राजा दाहिर सेन व झूलेलाल के साथ भक्त नामदेव जी को भी अपना आराध्य मानते हैं। राजस्थान मेंजोधपुर में सिंधी समाज द्वारा नामदेव जी का मंदिर बनाया हुआ है। उसके सचिव महेश खेतानी ने बताया कि 88 वर्ष पहले देश के विभाजन से पूर्व अखंड भारत के समय सिंध के हैदराबाद जिले के तहसील में टंडो आदम में संत नामदेव का मेला लगता था। संत नामदेव ट्रस्ट व पूज्य सिंधी सेंट्रल पंचायत सिंधी छीपा समाज की गतिविधियां आयोजित करती है।

सिंधी कॉलोनी शास्त्री नगर स्थित श्रीनाथ संत नामदेव मंदिर,जोधपुर

(iii) राजपूत छीपा रमेश चंद्र पुत्र रतीराम पटिया–रूपनगढ़ (किशनगढ़) अजमेर राजस्थान के अनुसार : त्रेता युग में सूर्य वंशी राजाओं में एक राजा धार क्षत्री क्षमाधर नाम से हुए, इनका विवाह राजा वासपत की बेटी धरमाबाई के साथ हुआ था उन्होंने अपना राज्य छत्तीसगढ़ पर स्थापित किया, उसी समय परशुराम जी क्षत्रियों का संहार कर रहे थे और राजा क्षमाधर को मारने के लिए गये, क्षमाधर देवी के मन्दिर में छुप गये, किसी प्रकार परशुराम जो को वह खबर लग गई, और वे वहां पहुँच गये, अन्ततः राजा क्षमाधर परशुराम के चरणों में गिर पड़े परशुराम को पहली बार दया आ गई और मारने से छोड़ दिया यह कहकर कि जाओ तुम आज से क्षत्री न कहकर छीपा नाम रख लो, एवं रंगने छापने का नाम शुरू करो।

परशुराम जी के बचनों का राजा क्षमाधर ने अक्षरशः पालन किया। परशुराम जी अपने सामने यह काम क्षमाधर से करवाया उस समय छेवले (सुकपल) के फूल एवं समुद्र फैन का रंग बनाकर राजा एवं रानी ने यशोदा जी के चीर (साड़ी) को रंगा था।

प्रस्तुत प्रमाण हमारी प्राचीन जर जरी पुस्तको में प्राचीन भाषाओं में विद्यमान है बस यहीं से सूर्यवंशी क्षत्रिय समाज, छीपा समाज कहलाने लगा। राजपूत छीपा समाज ने 2022 में प्रथम फोटोयुक्त परिचायिका (जनगणना) ''यथार्थ,'' का प्रकाशन किया है। यह समाज उत्तर प्रदेश के झांसी, महोबा, मऊरानीपुर बांदा, फतेहपुर, ललितपुर आगरा, वृंदावन, मथुरा, महाराष्ट्र के पूणे, मुम्बई, नागपुर, अमरावती, यवतमाल, राजकोट (गुजरात) बलसाड़ (गुजरात), मध्यप्रदेश के छतरपुर, कटनी, ग्वालियर, भोपाल, टीकमगढ़, सागर, राजस्थान पंजाब में फैला हुआ था। इसके 54 गौत्र है जिनमें कुछ गहलोत छीपाओं धुरेटिया, पंवार, जाजपुरे, बडगूजर, बौल्या, गोठलवाल नरवरिया, बंदीवार, वृग, खींची, धनोपिया, उदयवाल, निरवानियां, मालीवाल से मिलते हैं। यह समाज भगवान राम व कृष्ण को अपना आराध्य मानते हैं। संत नामदेव जी की इनको विशेष जानकारी नहीं हैं।

(iv) वैष्णव छीपा – गहलोत छीपा खांप के समाज बंधु जो मध्य प्रदेश में रहते हैं वे यद्यपि अखिल भारतीय नामदेव छीपा महासभा से जुड़े हैं परंतु अपने आप को वैष्णव छीपा के नाम से कहलाना ज्यादा ठीक समझते हैं। उनका कहना है कि हमारे पूर्वज छपाई कर्म के साथ जीवन में बैष्णव धर्म की पालना करते थे।

(v) गोहिल क्षत्रिय (छीपी) समाज – गहलोत छीपा खांप के समाज बंधु जो मथुरा, आगरा, भरतपुर के आस–पास रहते है वे अपने आप को गाहिल क्षत्रिय (छीपी) कहलाना पसंद करते हैं। इन स्थानों के लोग अपने आप को क्षत्रिय राजपूत कहते हैं।

2. दर्जी

शूरसेनजी की बड़ी रानी गोलोतिमा के छोटे पुत्र कमलादित्य कपड़ों की दर्ज वस्त्रों को तहशुदा काटते थे। वे गाँव टंकाणी में निवास करते थे व सिलाई का कार्य करते थे, इससे वे टांक, टांक दर्जी कहलाए। कई टांक बन्धु सिलाई के साथ छपाई तथा व्यापार करते थे अतः टांक छीपा कहलाए। टांकदर्जी या टांकछीपा कमलादित्य महाराज के वंशज हैं ।राजस्थान,हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश पंजाब के कई हिस्सों में दर्जी अपने आप को टांक, छीपा दर्जी भी कहते हैं। राजस्थान में आज भी पुष्कर में दर्जी समाज के मंदिर पर छीपा दर्जियान मंदिर लिखा हुआ है । टांक समाज की अखिल भारतीय संस्था अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा के नाम से कार्यरत है । टांक समाज भी संत शिरोमणि श्री नामदेव महाराज को अपना आराध्य मानते हैं ।

अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा ने नामदेव टांक (रोहिल्ला) क्षत्रिय समाज की गोत्रावली प्रकाशित 2002 में की हैं। इसके अनुसार कर्नल टॉड कृत ''एनल्स एंड एंटीक्विटीज ऑफ़ राजस्थान'' के अनुवादक डॉ. कालूराम शर्मा ने अपने ''राजस्थान का इतिहास'' में टांकों के राज्य और साम्राज्य के संबंध में विस्तार से लिखा है। ब्रिटिश

सरकार ने भी इस समाज का नाम टांक क्षत्रिय समाज माना है। सन 1930 के जनगणना आयुक्त ने रोहिल्ला टांक क्षत्रिय तथा टांक क्षत्रिय में अंतर किया है। इन दोनों के लिए छीपी/दर्जी/छापागर शब्दों का प्रयोग किया है। टांक छीपा/दर्जी समाज में 3 घटक प्रमुख नजर आते हैं। प्रथम मारवाड़ी नामदेव टांक क्षत्रिय, द्वितीय रोहिल्ला टांक क्षत्रीय तथा तृतीय पंजाबी टांक क्षत्रिय। इन तीनों के लगभग 172 गोत्र हैं। तीनों में गोत्रों की समानता है। विभाजन का मुख्य आधार भौगोलिक है। मारवाड़ी नामदेव एवं रोहिल्ला टांक क्षत्रिय बंधु अखिल भारतीय टांक क्षत्रिय महासभा से जुड़े हुए हैं जिसकी स्थापना 1971 में हुई है। यह संस्था नामदेव टांक क्षत्रिय चैरिटेबल ट्रस्ट तथा विट्ठल संसार प्रकाशन ट्रस्ट की सहायता से शिक्षा व विट्ठल संसार पत्रिका प्रकाशन का कार्य करती हैं। टांक समाज की ''श्री टांक क्षत्रिय सभा जयपुर'' विगत 125 वर्षों से कार्यरत है।

1921 में दिल्ली दरियागंज में रोहिल्ला टांक क्षत्रिय महासभा स्थापित हुई है। गत 100–125 वर्षों में मारवाड़ व अजमेर के टांक समाज के लोगों तथा हरियाणा और दिल्ली समाज के लोगों में कुछ रीति–रिवाजों में अंतर के कारण टांक समाज व रोहिल्ला समाज अपनी गतिविधियां अलग–अलग संचालित करने लगे हैं।

टांक समाज मुख्यतः राजस्थान, पंजाब,–हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश व महाराष्ट्र में है। नामदेव टांक क्षत्रिय समाज तीन प्रकार से फैला हुआ है। प्रथम प्रकार में वे लोग हैं जो मूलतः राजस्थान के हैं जो यहीं से अलग–अलग जगह गए हैं। दूसरे वे हैं रूहेलखंड से गए हैं जो अपने आपको रोहिल्ला कहते हैं। रोहिल्ला समाज के वरिष्ठजन कहते हैं कि रोहिल्ला एक उपाधि थी जो सैना में शूरवीर, अदम्य साहसी विशेष युद्ध कला में प्रवीण को मिलती थी। धीरे–धीरे जितने रोहिल्ला उपाधि धाक थे उनकी एक जाति बन गयी। समाज के वरिष्ठजन कहते हैं कि रोहिल्ला में दो प्रकार का विभाजन था एक टॉक दूसरे दिलबारी। दिलबारी रोहिल्ला अपने आप को टॉक रोहिल्ला से उत्तम मानते थे। रोहिल्ला समाज के कुछ लोग भगवान राम को ही क्षत्रिय होने के कारण आराध्य मानते थे। तीसरे वे लोग हैं जो राजस्थान में जाकर पंजाब में बस गए हैं जो पंजाबी टांक क्षत्रिय कहलाते हैं जिसमें सिख समाज से जुड़े टांक बन्धु भी शामिल है।

अब दर्जी खांप का भी विभाजन भाषा,कार्य ,समाज में नए संतों के अवतरण ,नए आराध्य के अनुसरण के कारण हो गया जो निम्न प्रकार है ।

अ) शिंपी

महाराष्ट्र में शिम्पी पारंपरिक रूप से कपड़ों और सिलाई के व्यवसाय में शामिल भारतीय जाति के लिए एक छत्र शब्द है । भक्ति आंदोलन के संत नामदेव,इस समुदाय के संरक्षक के रूप में पूजनीय हैं। समुदाय का पारंपरिक व्यवसाय सिलाई या कपड़ा छपाई रहा

है। उन्हें मराठी में शिम्पी या हिंदी में छीपी /छीपा कहा जाता है । महाराष्ट्र में छीपा/दर्जी समाज शिंपी नाम से जाना जाता है जिसका कपड़े, सिलाई, रंगाई, फैशन डिजाइनिंग व्यवसाय से संबंध है। शिंपी को महाराष्ट्र में अन्य पिछड़ा वर्ग की श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है।

शिंपी की भी महाराष्ट्र में कई श्रेणिया हैं जैसे – मराठा शिंपी , नामदेव शिंपी, सैतवाल शिंपी, रंगारी शिंपी, मेरु क्षत्रिय शिंपी, अहिर क्षत्रिय शिंपी, वैष्णव शिंपी, भावसार शिंपी, तेलगु शिंपी,कोकणस्थ नामदेव शिंपी आदि।

शिंपी (दर्जी) समाज का अस्तित्व पूरे विश्व में है । इस समाज में एक संत का सृजन हुआ। उस संत के कपड़े के टुकड़े बिखरे हुए समाज को आपस में मिलाते थे। उस संत ने प्यार के धागों से कस कर सिल दिया। उन्होंने पूरे देश का भ्रमण किया और ज्ञान का दीप प्रज्वलित किया। इसलिए इस समुदाय ने गर्व और भक्ति के साथ संत नामदेव का नाम लिया। शिम्पी समुदाय के इस इतिहास से यह समझने में मदद मिलेगी कि संत नामदेव ने किस सामाजिक पृष्ठभूमि से इतना बड़ा काम किया।

आ) पीपावंशी दर्जी

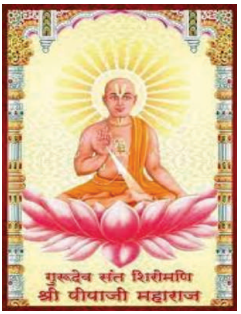

कालांतर में भारत में संत नामदेवजी के बाद कई संत हुए ।दर्जी समाज के कई बन्धु सिलाई का कार्य करते हुए उनके शिष्य बन गए ।तब से दर्जी समाज कई अन्य खान्पों में बंट गया ।

पीपाजी (14वीं–15वीं शताब्दी) गागरोन के शाक्त राजा एवं सन्त कवि थे। वे भक्ति आंदोलन के प्रमुख संतों में से एक थे। गुरु ग्रंथ साहिब के अलावा 27 पद, 154 साखियां, चितावणि व ककहारा जोग ग्रंथ इनके द्वारा रचित संत साहित्य की अमूल्य निधियां हैं।

भक्तराज पीपाजी का जन्म विक्रम संवत 1380 तदनुसार दिनांक 23 अप्रैल 1323 को राजस्थान में कोटा से 45 मील पूर्व दिशा में गागरोन में हुआ था।वे चौहान गोत्र की खींची वंश शाखा के प्रतापी राजा थे।

पिता के देहांत के बाद संवत 1400 में आपका गागरोन के राजा के रूप में राज्याभिषेक हुआ। अपने अल्प राज्यकाल में पीपाराव जी द्वारा फिरोजशाह तुगलक, मलिक जर्दफिरोज व लल्लन पठान जैसे योद्धाओं को पराजित कर अपनी वीरता का लोहा मनवाया। आपकी प्रजाप्रियता व नीतिकुशलता के कारण आज भी आपको गागरोन व मालवा के सबसे प्रिय राजा के रूप में मान सम्मान दिया जाता है।

दैवीय प्रेरणा से पीपाराव गुरु की तलाश में काशी के संतश्रेष्ठ जगतगुरु रामानन्दाचार्य जी की शरण में आ गए तथा गुरु आदेश पर कुएँ में कूदने को तैयार हो गए। रामानन्दाचार्य जी आपसे बहुत प्रभावित हुए व पीपाराव को गागरोन जाकर प्रजा सेवा करते हुए भक्ति करने व राजसी संत जीवन व्यतित करने का आदेश दिया। एक वर्ष पश्चात संत रामानन्दाचार्य जी अपनी शिष्य मंडली के साथ गागरोन पधारे व पीपाजी के करुण निवेदन पर आसाढ शुक्ल पूर्णिमा (गुरु पूर्णिमा) संवत 1414(ई .सन1492) को दीक्षा देकर वैष्णव धर्म के प्रचार के लिये नियुक्त किया। पीपाराव ने अपना सारा राजपाठ अपने भतीजे कल्याणराव को सौंपकर गुरुआज्ञा से अपनी सबसे छोटी रानी सीताजी के साथ वैष्णव–धर्म प्रचार–यात्रा पर निकल पडे।तब से काफी समाज बन्धु सिलाई का कार्य करते हुए पीपाजी के भक्त हो गए ।भारत में

यह समाज पीपा क्षत्रिय दर्जी समाज के नाम से जाना जाता है । यह समाज मुख्यतः राजस्थान, गुजरात, हरियाणा व मध्यप्रदेश में फैला हुआ है। संत पीपाजी ने भी संत नामदेव जी के आदर्शो से प्रभावित होकर सिलाई कार्य अपनाया तथा अपने अनुयायियों को इस कार्य के लिए प्रेरित किया।

इ) श्री दामोदर वंशीय क्षत्रिय जूना गुजराती दर्जी

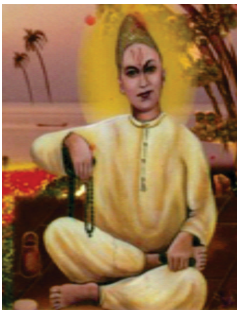

श्री दामोदर वंशी जूना गुजराती दर्जी समाज के आराध्य श्री श्री 1008 गुरु टेकचंद जी महाराज हैं ।उनका प्रादुर्भाव – वैशाख शुक्ल पूर्णिमा वि.स.1805 सन 1748 में हुआ तथा समाधि – आश्विन शुक्ल पूर्णिमा वि. स. 1868 सन 1781 में ली। घर में धार्मिक वातावरण होने से श्री टेकचन्दजी की विचारधारा बचपन से ही धार्मिक रही। एकदिन क्रोध में आकर उनके पिताजी ने कह दिया की अभी चले जाओ मेरे सामने से। मैं कुछ सुनना नहीं चाहता। जहाँ तुम जाना चाहो जा सकते हो। अब तुम मेरे घर में पैर मत रखना। तुमने घर को बदनाम कर दिया है। मूर्ख। श्री टेकचन्दजी ने पिता के मुख से इस प्रकार के शब्द सुने तो उनके कोमल हृदय को गहरा आघात पंहुचा। उन्होंने अपने मन में अपनी आत्मा से ध्यान कर जान लिया की इस नश्वर संसार में इश्वर के बिना और कोई मददगार नहीं है ! सदभाव से उस ईश्वर का भजन पूजन करना ही अच्छा है ! ऐसा विचार कर अपने माता, पिता, भाई, बहिन आदि सभी पूजनीय लोगों को मन ही मन प्रणाम कर पिता की आज्ञा शिरोधार्य करके घर छोड़कर निकल गए। जिस हालत में पिताजी के सामने खड़े थे वैसे ही चले गए। विक्रम सम्वत 1824 सन 1767 में घुमते घुमते एक दिन वे उन्हेल नाम के गाँव में पहुंचे। उन्हेल में कबीर पंथी एक संत श्री परसरामजी महाराज निवास करते थे। वही उन्हें उनका सत्संग मिला जिससे प्रभावित होकर उन्होंने सेवा की। उस अत्यंत ही सुन्दर एवं रमणीय स्थान पर यदि मुझे

अपना शिष्य बनाकर रहने का मोका दें तो कितना अच्छा हो , ऐसा विचार कर श्री टेकचन्दजी ने श्री गुरु परसरामजी के पास जाकर साष्टांग प्रणाम किया और आज्ञा पाकर कहा– गुरु महाराज आप मुझे अपना शिष्य बना लें जिससे आपके चरणों की सेवा करके कृतार्थ हो जाऊ। यह वचन सुनकर श्री गुरु महारज परसरामजी ने सार रहस्य व चमत्कार पहचान लिया और कुछ सोच कर कहा बेटे तेरे माता पिता धन्य है जिन्होंने तेरे जैसे पुत्र को जन्म दिया। मैं तुम्हे अपना शिष्य अवश्य बनाऊंगा। तुम अभी आश्रम में ही रहो। आश्रम के सभी शिष्यों को बुलाकर कहा – टेकचन्द यही रहेगा तथा शुभ दिन व समय देखकर दीक्षा दी जाएगी। कुछ दिन बीतने के बाद विक्रम सम्वंत 1825 सन 1768 में वैशाख शुक्ल पूर्णिमा के दिन श्री गुरु परसरामजी महाराज ने श्री टेकचन्दजी को साधू संत होने की गुरु दीक्षा देकर अपना शिष्य बनाया।

श्री टेकचन्दजी महाराज ने अपनी तीर्थ यात्रा उज्जैन से चैत्र शुक्ल पक्ष पुष्य नक्षत्र में विक्रम सम्वत 1841 सन 1784 में प्रारम्भ की तथा आश्विन शुक्ल पक्ष में विजयादशमी के दिन विक्रम संवत 1847 सन 1790 में वापस उज्जैन आकर शिप्रा (शिवप्रिया) में स्नान करके महाकालेश्वर के दर्शनकर तीर्थ यात्रा समाप्त की। तीर्थ यात्रा से आने के बाद उन्होंने भक्त जनों के आग्रह पर गुरु मन्त्र देना प्रारम्भ किया जिससे वे गुरूजी कहलाये। प्रबल ईश्वर भक्ति के कारण संत कहलाये। सत्संग में आने वाले भक्तों ने गुरूजी से दीक्षा लेने की इच्छा प्रकट की तो उन्होंने वि.सं.1852 के शुभ मुहर्त में दीक्षा देने का कार्य प्रारम्भ किया तथा आश्विन शुक्ल पूर्णिमा वि. स. 1868 सन 1781 में समाधि ली ।

चूँकि उनका जन्म दामोदर वंशी जूना गुजराती दर्जी परिवार में हुआ तथा वे एक संत हो गए इसलिये उनके समाधि के बाद दामोदर वंशी जूना गुजराती दर्जी समाज उनको अपना आराध्य मानने लगे ।यह खांप गुजरात व मध्यप्रदेश में अधिक संख्या में है ।

ई) भरतवंशी दर्जी

यह दर्जी समाज भगवान राम के छोटे भाई भरत जी को अपना आराध्य मानते है । भरत अपने परिवार, गुरु व सेना के साथ भगवान श्रीराम को वापस लेने चित्रकूट गये वहां जाकर उन्होंने भगवान श्रीराम से क्षमा मांगी व उन्हें वापस अयोध्या चलने को कहा किंतु भगवान श्रीराम ने अपना पिता को दिये वचन के अनुसार वापस चलने से मना कर दिया। इसलिये भरत केवल उनकी चरण पादुका लेकर वापस लौट आये।

चूँकि भगवान श्रीराम ने भरत को 14 वर्षों तक अयोध्या को सँभालने का आदेश दिया था इसलिये भरत ने अयोध्या का राज सिंहासन तो संभाला लेकिन श्रीराम की तरह

वनवासी रहते हुए उन्होंने अपना सब राजसी सुख त्याग दिया व अयोध्या के समीप नंदीग्राम वन में एक कुटिया बनाकर वहां से राज करने लगे ।

भरतवंशी दर्जी समाज का मानना है कि वे महाराज भरत जी के समय से सिलाई का कार्य कर रहे हैं। इनकी संस्था भरतवंशी राजपूत महासभा (रजिस्टर्ड) है। वे इस संस्था को राजपूत दर्जी समाज की संस्था मानते हैं ।भरतवंशी दर्जी ग्वालियर, आगरा, मथुरा व भरतपुर के आसपास अधिक संख्या में हैं ।

उ) भगत वंशी दर्जी

वैसे दर्जी समाज गुजरात में संत नामदेव ,संत पीपाजी एवं संत भगतजी को अपना आराध्य मानते हैं । परन्तु वहां प्रागजी भगत महाराज को अपना वंशज मानने वाले अधिक संख्या में हैं हैं ।प्रागजी भक्त का जन्म 20 मार्च 1829 को महुवा के छोटे से गांव में दर्जी परिवार में हुआ था। उनके पिता गोविंदभाई दर्जी थे, उनकी मां मालूबाई दर्जी थीं।

वह अक्सर अपने दोस्तों को भगवान की पूजा के महत्व पर बातचीत करते थे ।

प्रागजी का स्वामीनारायणजी से परिचय हुआ। सद्गुरू योगानंदस्वामी ने स्थानीय स्वामीनारायण मंदिर का दौरा किया और उन्हें सत्संगी के रूप में दीक्षा दी ।

भगतजी महाराज (20 मार्च 1829 – 7 नवंबर 1897), प्रागजी भक्त के रूप में पैदा हुए, जो गुजरात के स्वामीनारायण संप्रदाय में एक गृहस्थ भक्त थे। बोचासन वासी अक्षर पुरुषोत्तम स्वामीनारायण संस्था (BPS) में उन्हें स्वामीनारायण संप्रदाय का दूसरा आध्यात्मिक उत्तराधिकारी माना जाता है। अपने प्रवचनों के माध्यम से उन्होंने इस विश्वास को प्रचारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई कि स्वामीनारायण पुरुषोत्तम, सर्वोच्च व्यक्ति थे, और उनके अपने गुरु, गुणतीतानंद स्वामी, भगवान के दिव्य निवास अक्षर थे। एक निचली जाति के गृहस्वामी के रूप में उनकी आध्यात्मिक अनुभूति और अभ्यास ने नई मिसाल कायम की और इस विचार के खिलाफ एक कवच के रूप में काम किया कि आध्यात्मिक उत्थान उच्च जातियों तक ही सीमित था।इसलिए गुजरात का दर्जी समाज व स्वामीनारायण मंदिर स्थलों पर रहने वाले सभी समाज बन्धु उनको अपना आराध्य मानते है ।

ऊ) रोहिला टांक क्षत्रिय :–

भारत में हरियाणा ,दिल्ली ,पंजाब ,उत्तरप्रदेश आदि स्थानों पर रोहिल्ला समाज के लोग काफी संख्या में निवास करते हैं । रोहिल्ला समाज के लोग अधिकांश सिलाई का काम

करते हैं तथा अपने आप को दर्जी समाज का अंग मानते है ।अधिकांश रोहिल्ला समाज संत नामदेव जी को अपना आराध्य मानते है परन्तु आजकल कुछ लोग महाराजा रणवीर सिंह रोहिल्ला को अपना आराध्य मानते हैं ।रणवीर सिंह रोहिल्ला का जन्म कार्तिक कृष्ण पक्ष प्रथमा को 1204 ईसवीं को हुआ जब सभी राजपूत शक्तियां गौरी के आक्रमण का शिकार हो चुकी थी और मुसलमान अपनी सत्ता कायम करने को दमन कर रहे थे तभी 1253 ईसवी में नासीरुद्दीन महमूद को धूल चटाई रानी तारा देवी ने जो विजयपुर सीकरी के राजा की पुत्री थी। रोहिल्ला दर्जी समाज को महाराजा रणवीर सिंह रोहिल्ला जी पर गर्व है उन्होंने रोहिल्ला साम्राज्य की स्थापना की और बड़ी वीरता के साथ शासन किया ।

रोहिला–टांक क्षत्रियों के क्रमबद्ध इतिहास का गहन अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि रोहिला –टांक क्षत्रिय समाज स्वयं अपने आप से आज तक अनभिज्ञ रहा है । समाज का आम व्यक्ति आज तक यही जानता रहा है कि रोहिला केवल मुसलमान पठान ही थे और उन्हीं के द्वारा कठेहर प्रदेश का नाम रुहेल खंड के नाम से विख्यात हुआ है ।

कालांतर में सभी क्षत्रिय वंशों में रोहिला शाखा सम्मिलित रही है और उसका अलग अस्तित्व रहा है । जैसे कि पृथ्वीराज रासौ में 36कुलों की गणना और 36शाही खानदानों तथा वर्तमान के आधार पर 36राजवंश से यह प्रमाणित हो जाता है कि रोहिला शाखा भी राजवंशों में सम्मिलित रही है ।

पृथ्वीराज चौहान के परममित्र और कवि चन्द्रबरदाई ने अन्य वर्गों के राजपूतों के साथ–साथ रोहिला क्षत्रियों का वर्णन किया है जो पृथ्वीराज के दरबार के प्रमुख सौ वीरों में स्थान प्राप्त थे जिसका उल्लेख इस प्रकार किया गया है :

वज्जिथ जयचन्द चलऊ दिल्ली सुर पेषण,

चन्द वर दिया साधि बहुत सामन्त सूर धन,

चहूं प्रान राठवर जाति पुंडेर गुहिला,

बड़ गूजर पामार कुरभ जांगरा रोहिला ।

इत्ते सवहित भूपति चलऊ उड़ी रेन किन्नऊ नभऊं

एकु–एकु लष्य लष्य बह चले साथ राजपूत सऊ ।।

प्राचीन काल में रोहिला क्षत्रियों का स्थान बहुत ऊंचा था जिसका विस्तृत वृतांत आइने–ए–अकबरी में किया गया है ।

वास्तव में रोहिल्ला एक उपाधि थी जो शूरवीर, अदम्य – साहसी विशेष युद्ध कला में प्रवीण, उच्च कुलीन सेनानायको, और सामन्तों को उनके गुणों के अनुरूप क्षत्रिय वीरों को तदर्थ उपाधि से विभूषित किया जाता था – जैसे – रावत – महारावत, राणा, महाराणा, ठाकुर, नेगी, रावल, रहकवाल, रोहिल्ला, समरलछन्द, लखमीर आदि। अखिल भारतीय रोहिल्ला क्षत्रिय विकास परिषद् रोहिल्ला समाज की राष्ट्रीय स्तर की संस्था हैं ।

ए) काकुत्स्थ दर्जी

काकुत्स्थ वंश का उद्गम सूर्य वंश के प्रथम राजा इक्ष्वाकु के पुत्र विकुक्षि के पुत्र वीर पुरंजय काकुत्स्थ से हुआ ।विभिन्न प्रमाणिक पौराणिक ग्रंथों के अनुसार काकुत्स्थ वंश सूर्यवंश की ही उत्तराधिकारी शाखा का नाम है।इस वंश में अनेकों राजाओं ने इस भारत वसुंधरा पर हजारों वर्ष शासन किया जिसमें राजा अनेना, पृथु, सत्यवादी हरिश्चंद्र, दिलीप, रघु, दशरथ, श्री राम, भरत, पृथ्वीराज एवं महाराणा प्रताप आदि प्रमुख है।पुराणों के अनुसार काकुत्स्थकी उपाधि देवासुर संग्राम में इंद्र की सहायता करके वीरता दिखाने पर वीर पुरंजय को मिली थी। तब से सूर्यवंश मेंही काकुत्स्थ वंश चला।

काकुत्स्थ वंश भारतवर्ष में ऐसा हिन्दू समाज है जो उदर– भरण हेतु वस्त्र सीवन कला अपनाए हुए हैं।ऐसा करने के कारण गांव कस्बे के लोग तभी से दर्जी से संबोधित करते हैं।इस समाज का मानना है कि काकुत्स्थ समाज पिछड़ा नहीं है बल्कि आर्थिक संसाधनों से पिछड़े हैं।

काकुत्स्थ क्षत्रियों का मुख्य गोत्र कश्यप है परन्तु कहीं कहीं इन क्षत्रियों के गोत्र गौतम, भारद्वाज,गाधिज भी हैं ।

काकुत्स्थ समाज के आराध्य काकुत्स्थ महाराज हैं परन्तु अपना आदर्श गुरु प्रमुख संत नामदेव जी महाराज को मानता हैं जिन्होंने समाज को 1336 ई.में सोमवार बसंत पंचमी को अपना कंठीबद्ध शिष्य बनाया था ।उस समय मुस्लिम शासक फिरोजशाह तुगलक का कहर इस समाज पर बड़ी बर्बरता से चल रहा था ।वह बलात इस समाज का धर्म परिवर्तन कराने को दबाव डाल रहा था ।ऐसे समय में इस महान संत ने इस समाज को अपना शिष्य बनाकर धर्म परिवर्तन से बचाया ।इसी कारण से संत नामदेव समाज के लिए अति पूजनीय हो गए।यह समाज उत्तर प्रदेश के रूहेलखंड क्षेत्र व अवध क्षेत्र में शाहजंहापुर ,सिद्धपुरा,काश्गंज व फर्रुकाबाद तथा मध्य प्रदेश के रीवा क्षेत्र में विशेष रूप से है। काकुत्स्थ उत्तरप्रदेश में एक पिछड़ी जाति के रूप में पंजीकृत है। काकुत्स्थ क्षत्रिय महासभा

(पंजीकृत) इस समाज में विभिन्न सामाजिक गतिविधियां आयोजित करती है।

ऐ) मेरु/चिपोल्लू(मेरा)-Chippolu(Mera)

आन्ध्र प्रदेश व तेलंगाना प्रांत में सिलाई/छपाई कार्य करने वालों को मेरु/ चिप्पोलु (मेरा)-Chippolu(Mera) कहा जाता है ।आंध्र प्रदेश की पिछड़ी जातियों की सूची में 5वीं जाति समूह डी है। उन दिनों जब मापने के टेप उपलब्ध नहीं थे, वे हाथ की गणना के अनुसार माप लेते थे और कहीं कपड़े काटते थे। तो वे कहते थे कि ये आंसू बहाने वाले लोग हैं। समय के साथ वे चिपोलू बन गए। उन्हें चिप्पोलू, मेरु और मेरा जाति के नाम से जाना जाता है और महाराष्ट्र में शिंपी के नाम से जाना जाता है। चिप्पोलू, मेरु और मेरा जाति हालांकि पूरे राज्य में फैले हुए हैं, वे तेलंगाना क्षेत्र, गुंटूर और कृष्णा जिलों में बड़ी संख्या में पाए जाते हैं। आजकल ज्यादातर लोग तैयार कपडे पसंद करते हैं। इसलिए मेरु जातियां अपनी नौकरी खो रही हैं। एक जोड़ी कपड़े सिलने में प्रति व्यक्ति 200 रुपये का खर्च आता है। उसी पैसे से नए कपड़े देने के लिए तैयार दुकानें आ गईं और उनका करियर खराब हो गया। दर्जी को दिहाड़ी मजदूर बनना पड़ा। इसके साथ ही कटिंग मशीनों के आने से उनका अस्तित्व संदिग्ध हो गया।

हैदराबाद समाज की कल्याणकारी गतिविधियां मेरु कला संगम द्वारा संचालित है ।ये शैव भक्त हैं ।मेरु खांप के लोगों का मुख्य व्यवसाय पीढ़ियों से एक साथ 'सिलाई' करना रहा है। यह खांप प्रमुख रूप से हैदराबाद राज्य, जिसमें तेलंगाना, कर्नाटक और मराठवाड़ा में अधिक मात्रा में है ।

सिलाई करने वालों को उर्दू में 'दरजी' और तेलुगु में 'मेरु' कहा जाता है । 1956 में राज्य के पुनर्गठन के बाद, तेलंगाना क्षेत्र को आंध्र प्रदेश राज्य, कर्नाटक भाग को कर्नाटक राज्य और मराठवाड़ा भाग को महाराष्ट्र राज्य में मिला दिया गया। इस प्रकार मेरु अधिकतर इन तीन राज्यों में फैले हुए हैं ।महाराष्ट्र में मेरू को शिंपी क्षत्रिय कहा जाता है।

मेरु खांप ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन और हैदराबाद मुक्ति आंदोलन में अन्य लोगों के साथ बहुत उत्साह से भाग लिया है। कई लोगों की जान चली गई थी और कई को जेल भेज दिया गया था। प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी जैसे: श्री के.वी. केशवुलु, कंदुला पंडरीनाथ, पोलकम वेंकट रमैया, काशीनाथ (अधिवक्ता), शिवराम पपैया, दुर्याला अनंत रामुलु, पेंड्याला चंद्रैया, के. वीरप्पा, राजुलादेवी हनुमंत राव, श्रीमतीनोमुला राजामौली, केवल मेरु समुदाय से संबंधित हैं।मेरु खांप ने आन्ध्र प्रदेश व तेलेंगाना में धार्मिक अनुष्ठान, भजन और सत्संग करने के लिए भक्ति और आध्यात्मिक वातावरण के लिए विभिन्न स्थानों पर मंदिरों का निर्माण किया है।

मेरू खांप को को विरासत में मानव जाति के प्रेम के प्रति एक झुकाव मिला है और 'मनुष्य की सेवा ही ईश्वर की सेवा है' के दर्शन में विश्वास करते हैं। इस दर्शन को हकीकत में बदलने के लिए, वे पवित्र स्थानों और पवित्र नदियों के तट पर तीर्थयात्रियों के लिए चौलियों के निर्माण में अपना योगदान देते हैं। मेरु द्वारा तिरुमाला तिरुपति पहाड़ियों, वेमुलावाड़ा, भद्राचलम, एलुरु नसाराम, धर्मपुरी और अन्य तीर्थ केंद्रों पर चौलियों का निर्माण किया जाता है। वे 'नित्यानंदनम' योजनाओं 'मंदिरों में भक्तों को मुफ्त भोजन' के लिए भी योगदान देते हैं।

चूँकि नामदेवजी ने अपने अभंगों में छीपी/छीपा /शिंपी /दर्जी ,सुई .धागा आदि शब्दों का प्रयोग किया है ।इसलिए आज छीपा व दर्जी समाज के आराध्य संत नामदेवजी है ।ये दोनों खान्पें ही संत नामदेव जी को मानते है ।

3. भावसार

शूरसेनजी की दूसरी रानी का नाम बिन्दावती था । बिन्दावती के पुत्र बुद्धादित्य महाराज ने भावनगर(गुजरात)में निवास किया तथा उनके वंश की खांप भावसार छीपा के नाम से विख्यात हुई । बिन्दावती माता से बुद्धादित्य के नाम से बंधारा खांप प्रकट हुई,इनके 160 गोत्र हैं।बुद्धादित्य ने वस्त्र बंधेज (टाई एवं डाई) का कार्य आरम्भ किया ।इनके भावनगर में रहने से इनको भावसार भी कहते हैं ।

यह भी वस्त्रोंकी रंगाई के साथ बंधेज का काम भी करते हैं।भावसार खांप माता हिंगलाज को अपना आराध्य मानते हैं ।

भावसार क्षत्रिय समाज के लोग विशेषकर भारत के दक्षिण पश्चिम प्रान्तों में निवास करते हे। मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, गोवा में भावसार समाज का बाहुल्य तथा दिल्ली एंव छत्तीसगढ़ में अल्प संख्या में भावसार समाज के लोग निवास करते हैं ।

भावसार जाति की उत्पत्ति के बारे में अलग-अलग किवंदतियाँ प्रचलित हें ।ये किवंदतियाँ पूर्व में उल्लेखित क्षत्रिय वर्ण परिवर्तन का पौराणिक आख्यान से मिलती जुलती है । ये किवंदतियाँ हमारे भाट की पोथी में लिखित बात का समर्थन करती हैं ।

प्रथम किवंदति के अनुसार प्राचीन काल में भार्गव जमदग्नि ऋषि के पास कामधेनु 'गाय ' थी । क्षत्रिय राजा कार्तवीर्य ऋषि के आश्रम से कामधेनु गाय का अपहरण कर ले गये थे । इस घटना से क्रोधित होकर ऋषि पुत्र श्री परशुराम ने पृथ्वी को क्षत्रिय विहिन करने का

व्रत लिया । व्रत पूर्ति के लिए परशुराम हाथ में फरसा लिये क्षत्रियो का सहार करने निकले । वे सिंध प्रदेश में भी पहुंचे । सिंध प्रदेश के एक ग्राम में भावसिंह एंव सारसिंह नाम के दो क्षत्रिय भाई रहते थे, जो राजाज्ञा से ग्राम रक्षा के प्रभारी थे । राजा ने परशुराम जी के आने का समाचार जानकर नगर सेठ एंव राजपुरोहित को बुलाकर विचार विमर्श किया और दोनों भाइयो की रक्षा के लिये उनका विवाह नगर सेठ एंव राजगौर की पुत्रियों से कर दिया । सिंध प्रदेश के उक्त ग्राम में परशुराम जी के पहुँचने पर उनका दोनों भाई क्षत्रिय नहीं हे, ऐसा परिचय बताया तो परशुराम जी ने उन्हें छोड़ दिया । कालांतर में दोनों भाईयो से जो संतान उत्पन्न हुई उन्हें भावसार कहकर पुकारा जाने लगा अर्थात (भाव + सार = भावसार)।

द्वितीय दंत कथा के अनुसार जब परशुराम क्षत्रियो का संहार कर रहे थे । तब भावसिंह एंव सारसिंह माँ हिंगलाज की शरण में आए ओर दोनों भाईयो की भक्ति भावना से प्रसन्न होकर हिंगलाज माता ने उनकी चुनरी से रक्षा की और नाम के पहले शब्द भाव एंव सार को मिलाकर भावसार नाम दिया गया। मूल क्षत्रिय वंश के होने तथा माता की चुनरी से रक्षण होने से माता ने वस्त्र (चुनरी) रंगने, छापने का व्यवसाय अपनाने को कहा, तबसे भावसार वस्त्र रंगने, छापने का व्यवसाय करने लगे ।

तृतीय दंत कथा अनुसार सिंध प्रदेश में शूरसेन नाम के क्षत्रिय राजा हुए । उनके भावसिंह एंव सारसिंह नाम के दो पुत्र थे । राजा ने परशुराम के व्रत से पुत्र की रक्षा हेतु माता हिंगलाज से प्रार्थना की । प्रसन्न होकर माता ने शूरसेन के पुत्रो की रक्षा का वचन दिया और परशुराम को उनका वध करने से रोका । जिससे धर्म संकट पैदा हो गया, एक ओर परशुराम जी का व्रत एंव एक माँ शक्ति स्वरूप स्वयं । ऐसी विकट स्थिति के समय वहां भगवान राम–लक्ष्मण प्रकट हुए एंव उन्होंने निश्चित किया कि भावसिहं एंव सारसिंह अपना व्यवसाय (क्षत्रिय कर्म) बदलेंगे एंव यहाँ से जावेगें तथा उनके वंशज भावसार कहलाएंगे । माता ने विभिन्न वनस्पतियों से रंग निर्माण कला सिखाई तथा रंग छापने का व्यवसाय करने को कहा एंव भावसार नाम दिया ।

गौत्र पुराण के अनुसार भावसार मूल क्षत्रिय वंश के होकर आजीविका के लिये सिंध से पंजाब की ओर गये । भारत पर मुगलों के आक्रमण के समय राजस्थान एंव गुजरात की ओर आये और वहां से अलग–अलग प्रान्तों में गये । रंग छापने के व्यवसाय के कारण बड़ी नदियों, बड़े तालाब तथा गर्म पानी वाले क्षेत्रो में भावसार बस गये । वर्तमान में हर क्षेत्रो में भावसार अपना योगदान दे रहे हैं

भावसार को भावसार क्षत्रिय के नाम से भी जाना जाता है, यह खांप महाराष्ट्र , गुजरात , कर्नाटक , मध्य प्रदेश , तेलंगाना , आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और राजस्थान में पाई जाती है । उनका पारंपरिक पेशा कपड़े की बंधेज, रंगाई और छपाई है। हालांकि, कई लोग

समय के साथ दर्जी बन गए और उन्हें शिंपी के रूप में जाना जाता है महाराष्ट्र में जबकि कपड़े की रंगाई और छपाई के पूर्व पेशे को जारी रखने वालों को रंगारे के रूप में जाना जाता है, लेकिन अधिकांश भावसार अब निजी क्षेत्र या सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों सहित आधुनिक व्यवसायों को अपना रहे हैं।

भावसार खांप की कुलदेवी माता हिंगला जिसका मन्त्र है ओम हिंगुले परम हिंगुले अमृत रूपिणी तनु शक्ति मन:शिवे श्री हिंगुलाय नम: ।

ब्रह्म क्षत्रिय–

देश में भावसार समाज की तरह हिंगला माता को मानने वाले ब्रह्म क्षत्रिय समाज भी है ।जिस प्रकार छीपा समाज एवं दर्जी समाज से कई उपजातियां निकली हैं उसी प्रकार से लगता है। भावसार समाज की भी एक उपजाति ब्रह्मक्षत्रिय समाज है। भावसार समाज हिंगलाज माता को अपनी आराध्य मानते हैं उसी प्रकार से ब्रह्मक्षत्रीय समाज भी हिंगलाज को अपनी आराध्य मानते हैं। माता हिंगलाज दोनों समाजों की कुलदेवी है ।

हिंगलाज पाकिस्तान के बलूचिस्तान प्रदेश के हिंगलाज में हिंगोल नदी के तट पर स्थित एक महत्वपूर्ण तीर्थ–स्थल है । यहाँ हिंगलाज माता का मन्दिर है, इसको 51 में से एक शक्तिपीठों में गिना जाता है । देवी का नाम बांग्ला, असमिया और सस्कृत में इसी नाम से जाना जाता है । आयुर्वेद शास्त्र में भी यह नाम आता है । कराची के यह कोई 250 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में आता है । अधिकतर श्रद्धालु सिन्ध से आते हैं ।

इसी नाम से (हिन्गलाज देवी) भारत में एक और मन्दिर मध्यप्रदेश के रायसेन जिले की बरेली तहसील बारी में है । इस जगह को स्थानीय रूप से छोटी काशी कहा जाता है ।

यह मान्यता है कि हिंगलाज धाम जो कि पाकिस्तान के बलूचिस्तान प्रांत में स्थित है, वहां पर माता का ब्रह्मरंध्र गिरा था , यहां देवी हिंगलाज का बहुत शानदार और अलौकिक शक्तिपीठ स्थित है।

हिंगलाज माता मंत्र को देने वाले महान महर्षि दधीचि थे। ऐसा माना जाता है कि जब ऋषि श्री परशुराम ने अपने पिता श्री ऋषि जमदग्नि की मृत्यु क्षत्रिय राजा के हाथों होने के

कारण पृथ्वी पर से क्षत्रियों का नाश कर दिया और बार बार 21 बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन कर दिया तो ऋषि दधीचि ने क्षत्रिय वंश की रक्षा करने के लिए जो कि धर्म की स्थापना के लिए अत्यंत आवश्यक थी , अपने आश्रम में कुछ क्षत्रियों को ब्राह्मण कुमार बना कर रखा।

एक बार जब महर्षि दधीचि आश्रम से बाहर थे तो परशुराम ने सिंध के शासक रत्नसेन का वध कर दिया, जब महर्षि वापस आए तो उन्होंने हिंगलाज माता की आज्ञा और देवी को प्रसन्न करके देवी का मंत्र प्राप्त किया और रत्नसेन के बेटे को वह श्री हिंगलाज रक्षा मंत्र निम्न हैं– जिस से उसकी रक्षा हुई ओर वह सिंध का शासक बना और क्षत्रिय शासन किया। मंत्र निम्न है।

ॐ हिंगुले परम हिंगुले,अमृत–रूपिणि।

तनु शक्ति मनः शिवे,श्री हिंगुलाय नमः स्वाहा ।।

भावसार समाज व ब्रह्म क्षत्रिय समाज की उत्पत्ति की कहानी लगभग एक सी है ।दोनों समाजों के घरों में पूजा स्थलों पर एक सामान्य उपरोक्त चित्र को देखा जा सकता है जिसमें हिंगलाज माता,परशुराम जी, दो क्षत्रिय वीरनजर आते हैं। भावसार समाज की दृष्टि से वे दोनों भाव सिंह एवं सारसिंह हैं तथा ब्रह्मक्षत्रीय समाज उन्हें राजा रतन सेन के पुत्र कहते हैं। दोनों समाजों का पुश्तैनी कार्य रंगाई छपाई से संबंधित है । इस तरह भावसार समाज एवं ब्रह्मक्षत्रिय समाज में कुछ समानता को देखते हुए दोनों को एक श्रेणी में रखा जा सकता है।

4. रंगारा छीपा/रंगारे /हिंदू रंगरेज:

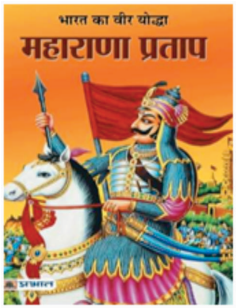

शूरसेनजी की तीसरी रानी राधावती थी राधावती के पुत्र रंगादित्य महाराज रंगाई के कार्य में बड़े प्रवीण थे तथा बंधेज का कार्य भी बड़ी प्रवीणता से करते थे । अतःकालांतर में वे रंगारा,बंधारा छीपा के नाम से विख्यात हुए।आजकल अधिकांश रंगारा छीपा महाराष्ट्र के नागपुर,चन्द्रपुर ,अमरावती ,मोवाड़ ,बरोड आदि स्थानों पर निवास करते हैं, परंतु बहुत कम लोग रंगाई के कार्य से जुड़े हैं ।आजकल रंगारा छीपा महाराणा प्रताप को अपना आराध्य मानते है जिनका जीवन काल 9 मई 1540 से 29 जनवरी 1597 रहा ।मध्य प्रदेश में पिछड़े वर्ग सूची में छीपा,भावसार व रंगारी खांप को कपडे पर छपाई व रंगाई के कारण रखा है ।क्षत्रिय रंगारी राजपूत समाज युवा संगठन मोवाड इस खांप के सामाजिक कार्य करने में सक्रिय है ।

रंगरेज फारसी भाषा का एक शब्द है, इसका अर्थ होता है– रंगने वाला (Dyer). कपड़ों की रंगाई के पारंपरिक व्यवसाय से जुड़े होने के कारण इस जाति का नाम रंगरेज पड़ा.

अधिकांश रंगारा/रंगरेज चार भारतीय राज्यों महाराष्ट्र, कर्नाटक, ओडिशा और तेलंगाना में रहते हैं। अन्य छोटे समूह भारत के अन्य राज्यों में रहते हैं। हिंदू रंगरेज विशेष रूप से उत्तर और मध्य भारत में रहते हैं । उनका पारंपरिक व्यवसाय कपड़े की रंगाई और छपाई का था। रंगरेज को पिछड़ी जाति में माना जाता है ।हिंदू रंगरेज मुख्य रूप से राजस्थान के मारवाड़, बिहार और उत्तर प्रदेश में पाए जाते हैं. मुग़ल काल में इनमें से कई धर्मांतरित हो गए तथा हिंदू रंगरेज जाति से धर्मांतरित होकर मुस्लिम रंगरेज बन गए ।धर्म परिवर्तन के बाद वे मंसूरी या मुस्लिम रंगरेज हो गए । ये लोग अपना मूल छीपा/क्षत्रिय /राजपूत जाति को मानते हैं। आज भी इनकी प्रमुख गोत्र – टॉक, चौहान, भाटी जो कि गहलोत छीपा गोत्र है। व्यवसायिक आधार पर रंगारा/रंगरेज समुदाय मुख्य रूप से तीन उप समूहों में विभाजित है–लालगढ़, नीलगढ़ और छीपी। इस सामाजिक पदानुक्रम में, छीपी सबसे नीचे आते हैं, क्योंकि यह कपड़े रंगते और छापते हैं । लालगढ़ और नीलगढ़ आमतौर पर नील (Indigo) से रंग तैयार करते हैं.इसके अतिरिक्त वे जामुन से भी रंग तैयार करते हैं। अन्य व्यवसायिक जातियों के भांति, इनके पारंपरिक व्यवसाय में गिरावट होने के कारण यह अब अपने पारंपरिक व्यवसाय को छोड़कर विभिन्न प्रकार के जीविका के अन्य विकल्पों और अन्य व्यवसायिक गतिविधियों में शामिल होने लगे हैं. इनमें से कुछ छोटे किसान हैं। इस समुदाय के कई सदस्य शिक्षित हो रहे हैं, जो सरकारी नौकरी या निजी क्षेत्र में कार्यरत हैं।कई रंगरेज़ कपड़े की रंगाई और छपाई के अपने मूल करियर को छोड़ रहे हैं। सस्ते, रासायनिक रंगों ने रंगरेज़ द्वारा उपयोग किए जाने वाले प्राकृतिक रंगों की जगह ले ली है, जो धोने के बाद फीके पड़ जाते हैं। शादियों जैसे भारतीय रीति–रिवाजों में समृद्ध रंग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कई रंगरेज ने कपड़े और कपड़े बेचने के व्यवसाय में संलग्न होना शुरू कर दिया है। अन्य रंगरेज़ व्यापार और अन्य छोटे व्यवसायों में शामिल हो गए हैं।

अधिकांश हिंदू रंगरेज़ अपनी प्राथमिक भाषा के रूप में मराठी बोलते हैं। कुछ कन्नड़ भी बोलते हैं, हिंदी, तेलुगु और उड़िया उनकी पहली भाषा है।

अतः स्पष्ट है कि चार खापें चार सगे भाइयों से ही प्रारंभ हुई और सभी ने ही क्षत्रिय वर्ण त्याग कर वैश्यवर्ण तथा वैश्यकर्म अपना लिया था। इसलिएआज चार खांपो का समाज वृहत छीपा समाजहै। चाहे वर्तमान समय में कोई भी उद्योग धंधा, व्यापार–व्यवसाय, नौकरी आदि क्यों न करते हो अथवा अपने नाम के आगे कुछ भी क्यों नहीं लगाते हो, छपाई तथा छपे हुए वस्तुओं का व्यापार नहीं करने पर भी वे मातालाच्छी(हिंगलाज,जगदंबा) के आदेश तथा भगवान परशुराम को हमारे द्वारा दिए गए वचन के अनुसार वैश्यकर्म, वैश्यवर्ण के अंतर्गत ही माने जाएंगे।आचरण ,व्यवहार , खानपान, विचारधारा आदि सभी दृष्टि से हम वैश्यों के समान है।

वैश्य वर्ण–कर्म रंगाई छपाई, व्यापार के अतिरिक्त हिंदू धर्म के अंतर्गत सनातन–वैष्णव धर्म एवं भगवतभक्ति की धारा भी हमारी जाति के लोगों में निरंतर बहती रही है। कंठी , माला, तिलक, मंदिर, यज्ञोपवित, भगवान राम,पांडुरंग, विट्ठल, श्री कृष्ण आदिहमारी पहचान है। ऐसे भक्तिमय वातावरण में ही यह संभव हो सका है कि हमारे समाज में संत शिरोमणि श्री नामदेव जी महाराज जैसे महान संत हुए हैं । इसके कई प्रमाण गोस्वामीजीनाभा कृत भक्तमाल, श्री प्रिय दास जी प्रणीत टीका, आदि हैं। सिखों के धार्मिक ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब में संत शिरोमणि नामदेवजी महाराज द्वारा रचित 61 अभंग (पद) उपलब्ध हैं । आजकल कई स्थानों पर चारों खापें नामदेव जी के नाम से अपने आप को जोड़ने लगी हैं।

■■■■

4. संत श्री नामदेव महाराज की जाति

संत शिरोमणि जी श्री नामदेवजी का जन्म महाराष्ट्र में 26 अक्टूबर, 1270 , कार्तिक शुक्ल एकादशी संवत् 1327 , रविवार को हुआ था, बसंत पंचमी माघ महीने के शुक्ल पक्ष की पंचमी को विसोबा खेचर से गुरु दीक्षा ली तथा 3 जुलाई सन 1350 शनिवार आषाढ़ कृष्णा त्रयोदशी विक्रम संवत 1407 को सपरिवार संजीवन समाधि लेकर मोक्ष प्राप्त किया । ।नामदेवजी के जीवन काल में गुलाम वंश (1206–1290),खिलजी वंश (1290–1320)एवं तुग़लक़ वंश (1321–1414) का शासन रहा ।फिरोज़ शाह तुग़लक़ (1351से 1388)ने अपनी हुकूमत के दौरान कई हिंदुओं को मुस्लिम धर्म अपनाने पर मजबूर किया। फिरोज़ शाह तुग़लक़ को कुछ इतिहासकार धर्मांध एवं असहिष्णु शासक मानते हैं।उसने हिन्दू जनता को जिम्मी(इस्लाम धर्म स्वीकार न करने वाले) कहा और हिन्दू ब्राह्मणों पर जजिया कर लगाया। डॉ आर.सी. मजूमदार ने कहा है कि , फिरोज़ शाह इस युग का सबसे धर्मान्ध एवं इस क्षेत्र में सिकंदर लोदी एवं औरंगज़ेब का अग्रगामी था।' इसी काल में भारत में भक्ति आंदोलन (800–1700) भी चला । संत नामदेव ने अपने भक्ति आंदोलन की सहायता से हिंदुओं को नैतिक समर्थन प्रदान किया तथा अपने चमत्कारों से मुस्लिम शासकों को हिंदुओं पर किए जा रहे अत्याचारों पर रोक लगाने का प्रयत्न किया । नामदेव जी का जन्म जिस घर में हुआ था वहां कपड़े की छपाई व सिलाई दोनों कार्य होते थे, निश्चित रूप इस कार्य को करने वाले को उस समय हीनता की दृष्टि देखते होंगे इसीलिए उन्होंने अपने अभंगों में कुछ अभंगों की रचना में अपने आप को छीपा व कुछ में दर्जी, शिंपी वे सिलाई के उपकरणों की चर्चा की है उससे लगता है कि वह छीपा,दर्जी (शिंपी) जाति में पैदा हुए थे । उदाहरण स्वरूप यहाँ हम कुछ अभंगों की चर्चा करते हैं :

1. गुरु ग्रन्थ साहिब में 43 वां अभंग व अन्य अभंग जहाँ उन्होंने अपने आप को छीपा बताया:–

हसत खेलत तेरे देहुरे आइआ ।।

भगति करत नामा पकरि उठाइआ ।।1।।

हीनड़ी जाति मेरी जादिम राइआ ।।

छीपे के जनमि काहे कउ आइआ ।।1।।रहाउ।।

लै कमली चलिओ पलटाइ।।

देहुरै पाछै बैठा जाइ।।2।।

जिउ जिउ नामा हरि गुण उचरै।।

भगत जनां कउ देहुरा फिरै।।3।।6।।

भावार्थ :इस अभंग की रचना नामदेव जी ने उस समय की थी, जब औंढा नागनाथ में ये अपने समर्थकों के सामने भजन गा रहे थे, तब वहां के पंडित ने आकर इन्हें मंदिर के पीछे की तरफ जाकर भजन गाने के लिए कहा था, तब नामदेव जी वहां जाकर गाने लगे थे, क्यूंकि उस पुजारी ने इन्हें निम्न जाति का बताकर इनका अपमान किया था इसलिए इनका मन बड़ा व्यथित था. अपने मन की व्यथा को इस अभंग के द्वारा व्यक्त करते हुए नामदेव जी कहते हैं कि वह तो हंसी ख़ुशी मंदिर के द्वार पर अपने प्रभु की स्तुति का गान कर रहे थे, कि पुजारी ने इन्हें एक साधारण सी छीपा जाति का बताते हुए वहां से हटा दिया था. उस पंडित की बात से इनके मन में ये संशय उत्पन्न हुआ कि जब कोई साधारण जाति वाला प्रभु का भजन गाने के लायक नहीं है, उसे ईश्वर की भक्ति का अधिकार ही नहीं है तो प्रभु ने इन्हें ऐसी साधारण छीपा जाति में पैदा ही क्यूँ किया. उस पंडित की बात से आहत ये अपना सामान लेकर मंदिर कर पिछवाड़े में आकर बैठ गए थे। वहां जब अपने भक्तों के कहने पर ये भजन गाने लगे तो प्रभु की कृपा से मंदिर का मुंह घूमकर इनकी तरफ हो गया था. यहाँ नामदेव जी कहना चाहते हैं कि ईश्वर अपने भक्त की जाति–पाती नहीं देखता, वह तो बस उसके मन का भाव देखता है, सो आप भले ही किसी भी जाति या समूह से ताल्लुक रखते हों, अपने परमात्मा की भक्ति करने से आपको कोई नहीं रोक सकता. लेकिन अपने प्रभु के प्रति आपकी भक्ति एकदम शुद्ध और निस्वार्थ होनी चाहिए.

2. एक अन्य अभंग में वह कहते है :–

आ भडै रे नौआ आ भणै रे ।

होति छोति कहि नहीं छीपा सूं । देवल मांही ना बडै रे ।।टेक।।

उत्तिम लोग देहरे आया । च्यारुं वरण चा भडै रे ।।1।।

उंठिभाई नांमदेव बाहरि आव । ज्यौं पंडित वेद भणैं रे ।।2।।

नामदेव उठि जब बाहरि आयौ । केसौ नै कल न परै रे ।।3।।

देवल फिरि नामा दिसि भईया । पंडित सब पांवा पडै रे ।।4।।

दास नामदेव कौ ऐसा ठाकुर । पण राषै हरि सांकडै रे ।।5।। 167

भावार्थ :

नामदेव जी को मंदिर में देख पंडित चिल्लाता है– 'देखो भाई देखो, ये कौन मंदिर में घुस गया है. उच्च जाति के इस मंदिर में ये छीपा जैसी छोटी जाति का आदमी कैसे आ गया.

पंडित के मुख से अपने प्रति इस तरह की बात सुनकर नामदेव जी मंदिर के बाहर पीछे की ओर चले गये. उसके बाद कुछ ऐसा हुआ जिसकी कल्पना भी किसी ने नहीं की थी.

मंदिर के साथ देव का मुँह भी घूमकर नामदेव की तरफ़ हो गया था. ये देख पंडित नामदेव जी के चरणों में गिर पड़ा था . नामदेव की भक्ति देख सब नतमस्तक हो गये थे ।

3. एक अभंग जहाँ उन्होंने ब्राह्मण ,बनियों से छीपा की तुलना की

उठिरे नामदेव बाहरि जाइ । जहां लोग महाजन बैठे आइ ।। टेक ।।

बांभण वणीयां उत्तिम लोग । नहीं रे नांमदेव तेरा जोग ।। 1 ।।

बार बार सीधा कुण लेह । को छिपीया ढिग बैसण देह ।। 2 ।।

हम तो पढीया वेद पुरानां । तू कहा ल्यायों ब्रह्म गियाना ।। 3 ।।

नामदेव मनि उपरति धरी । हीन जाति प्रभु काहे मोरी करी ।। 4 ।।

झाड़ि कबलीया चल्यो रिसाइ । मठ के पीछे बैठो जाइ ।। 5 ।।

पगां घूंघरा हाथां तारी नामदेव भगति करें पछि बारी ।। 6 ।।

धज कांपी देवल धरहरा । नांमदेव सनमुषि दूद्वारा फिरया ।। 7 ।।

नामदेव नरहरि दरसन भया । बांह पकड़ मिंदर में लीया ।। 8 ।।

जैसी मनसा तैसी दसा । नांमदेव प्रणवे बीसी बिसा ।। 2 ।।

भावार्थ–संत नामदेव यहाँ से उठ और बाहर जा । यहाँ तो महाजन लोग बैठने आते हैं ।ब्राहमण व बनियाँ उत्तम लोग होते हैं तेरा यहाँ बैठने का योग नहीं है अर्थात तू यहाँ बैठने लायक नहीं है । बार बार सीधा (व्रत के दिन पंडित को दिया जाने वाला खाने पीने का कच्चा सामान)कौन लेता है परन्तु क्या कभी छीपा को भी कोई काम के बदले चने का आटा(बेसन)भी पूरा बर्तन भर कर देता है ? हम तो वेद पुराणों के ज्ञाता हैं ,तुम यह ब्रह्म ज्ञान कहाँ से लाये ?इस पर संत नामदेव विट्ठल से अपनी व्यथा व्यक्त करते हैं कि हे प्रभो,मेरी हीन जाति काहे को की गई । यह कहकर संत नामदेव मंदिर के पीछे अपना कम्बल लेकर चले गए । जाकर पैरों में घुंघरू बांध कर हाथों में तारी लेकर भजन करने लगे । उस समय देवल में चमत्कार होता है, व धरती कांपती है और नामदेव के सन्मुख मंदिर का द्वार घूम जाता है ।नामदेवजी को भगवान के दर्शन होते हैं तथा भगवान नामदेवजी को बांह पकड़ कर मंदिर में ले जाते हैं ।नामदेव कहते हैं कि मनुष्य की जैसी भावना होती है उसकी गत (दशा) वैसी ही होती है ।

4. सिलाई व्यवसाय से जुड़े रहने की झलक हमें उनके इस अभंग में भी मिलती है

मनु मेरो गजु जिहबा मेरी काती, मपि मपि काटउ जम की फांसी,
कहा करउ जाती कहा करउ पाती, राम को नामु जपउ दिन राती,

रांगनि रांगउ सीवनि सीवउ, राम नाम बिनु धरीअ न जीवउ,
भगति करउ हरि के गुन गावउ, आठ पहर अपना खसमु धिआवउ,
सूइने की सुई रूपे का धागा, नामे का चितु हरि सउ लागा...

भावार्थ :लोगों का ऐसा मानना है कि अपने काम–काज और घर गृहस्थी के चक्कर में उन्हें भगवान को याद करने का समय ही नहीं मिलता. इसी बात का जवाब देते नामदेव जी ने इस अभंग के माध्यम से जनमानस को समझाने की कोशिश की है कि ईश्वर को याद करने के लिए विशेष अवसर या विशेष समय की आवश्यकता नहीं होती. नामदेव जी कहते हैं कि मेरे कपड़ा मापने की गज से कपड़ा मापते हुए मैं अपने मन के गज से अपने कर्मों को भी साथ साथ मापता रहता हूँ और अपनी कैंची से कपड़ा काटते समय अपनी जीभ को राम सुमिरण करते हुए कैंची की तरह चला कर अपने कर्मों की फांसी को काटता रहता हूँ. इस तरह हर समय ईश्वर को स्मरण करते रहने से जाति–पाती के झंझटों से मैं दूर रहता हूँ. क्योंकि हर समय राम भजन करने से इंसान का मन किसी अन्य बुराई की तरफ जाता ही नहीं है. मैं अपना कपड़ा रंगने का काम करते हुए भी ईश्वर को याद करके उसके रंग में रंग जाता हूँ. कपड़ों का रंग तो वक़्त के साथ साथ फीका पड़ जाता है, लेकिन एक बार प्रभु का रंग आप पर चढ़ जाता है तो समय के साथ फीका पड़ने की बजाय वह और गहरा होता जाता है. सिलाई का काम करने के साथ साथ मैं राम के नाम को भी साथ साथ सिलता रहता हूँ. राम के नाम के बिना तो मेरा एक पल भी काटना मुश्किल हो जाता है. हर समय मैं अपने ईश्वर के ध्यान में रहता हूँ. नामदेव जी कहते हैं कि प्रभु की कृपा से उन्हें अपनी लोहे की सुई सोने की लगती है और सूती धागा चांदी का, जिनसे वह हरि नाम की अपनी चादर को सिलते रहते हैं. उनका तो चित्त ही राम में लग गया है. उसके सिवा उन्हें कभी कुछ सूझता ही नहीं है. अपने काम में भी उन्हें हरि का नाम ही याद आता है. लिहाजा जीव का ये कहना कि अपनी रोजी रोटी के चक्कर में वह ईश्वर का नाम लेना ही भूल गया, मात्र उसका एक बहाना है. अगर वह चाहे तो अपने प्रभु को कभी भी याद कर सकता है.

5. नामदेव जी के दर्जी होने की जानकारी हमें निम्न अभंग में मिलती है :

हरि दरजी का मरम न पाया। जिनि यहु बागा पूरब बनाया ।। टेक ।।।
पाणी का चित्र पवन का धागा । ताकूं सीवत मास दस लागा ।। 1 ।।
स्यों सुरवाल मुकट बनि आया। ये दोइ हीरालाल लगाया ।। 2 ।।
भगति मुकति का पटा लिषाया। पूरण पारब्रह्म पद पाया ।। 3 ।।
आपै सीवै आप पहिरावै । निरत नांमदेव नांव धरावं ।। 4 ।।

संत नामदेव भगवान हरि को दर्जी की उपभा देते हुए कहते है कि जिस परमेश्वर ने

इस शरीर रूपी दर्जी का कोई भेद नहीं जान पाया। इस पानी रूपी शरीर (चित्र) को उन्होंने पवन रूपी धोग से नौ–दस मास में सिला है अर्थात् इसका निर्माण किया है। तथा शरीर पर मस्तक रूपी मुकुट बनाया जिस पर दो नेत्र रूपी हीरे जड़े है। नामदेव जी ने परमेश्वर की भक्तिकर मुक्ति का पट्टा लिखाया तथा परमब्रह्म का पद प्राप्त किया। वे कहते है कि हरिरूपी दर्जी स्वयं ही इस शरीर रूपी चौले को सिलकर तैयार कर प्राण पुरूष को पहना देता है। वे निरंतर हरि नाम उच्चारण करके अपना नाम (नामदेव) के अर्थ को सार्थक करते है।

चूंकि नामदेव जी का परिवार सिलाई व्यवसाय से जुड़ा था इसलिए स्वयं के दर्जी होने के कारण परमेश्वर की कल्पना भी दर्जी के रूप में की।

6. सिलाई व्यवसाय से जुड़े रहने की झलक एक और अभंग में

का करों जाती का करों पांती । राजाराम सेऊ दिन राती ।। टेक ।।

मन मेरी गज जिभ्या मेरी काती । रामरमे काटों जम की फासी ।। 1 ।।

अनंत नाम का सीऊं बागा । जा सीजत जम का डर भागा ।। 2 ।।

सोबना सीऊं हों सोऊं इंब सीऊं ।राम बिना हूँ कैसे जीऊं ।। 3 ।।

सुरति की सूई प्रेमका धागा ।नांमा का मन हरि सूं लागा ।। 4 ।।

भावार्थ

नामदेव कहते है कि जांति और पांति के झगड़े में नही पड़ना चाहिए मैं तो राजाराम दिन रात लीन रहता हूँ। मेरा मन गज और जीभ कैंची है, मैंने रामनाम से यम अर्थात काल की फांसी को काट दिया है। रामनाम रूपी कपड़े सिलना एक दिन का कार्य न होकर अनंत दिन सिलने का कार्य है। जिसके सिलने से यमराज का डर भी दूर हो जाता है। अब राम रूपी कपड़े सिलना ही मेरा कार्य है, जिसे कहीं भी कभी भी किया जा सकता है। और मैं राम के बिना जीवित नहीं रह सकता। नामदेव कहते है कि मैंने ज्ञान रूपी सुई और प्रेम रूपी धागे से यह सिलाई का कार्य करके अपने मन को हरि से लगा लिया है।

7. नामदेवजी ने अपने आप को शिंपी कहा :

हिन्दी साहित्य का इतिहास में आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं कि नामदेव भगवान विट्ठल को परब्रह्म मानते थे ।उनके आदेश पर नामदेव ने ओढा नागनाथ नामक शिव के स्थान पर जाकर बिसोबा खेचर नामक एक नाथपंथी (कनफटे) से दीक्षा ली।

इसके संबंध में नामदेवजी के ये वचन हैं––

मन मेरी सुई, तन मेरा धागा। खेचर जी के चरण पर नामा सिंपी लागा।

फिर उन्हीं गुरूजी की महिमा बखानते हुए कहते हैं

सुफल जन्म मोको गुरु कीना। दुख बिसार सुख अंतर दीना।।

ज्ञान दान मोको गुरु दीना। राम नाम बिन जीवन हीना।।

8. श्री गुरू ग्रंथ साहिब दर्पण के टीकाकार प्रोफेसर साहिब सिंह व अनुवादक भुपिन्दर सिंह भाईख़ेल ने नामदेव की जाति के सम्बन्ध में बताया

नामा छीबा कबीरु जोलाहा पूरे गुर ते गति पाइ ।।

ब्रहम के बेते सबदु पछाणहि, हउमै जाति गवाई ।।

सुरि नर तिन की बाणी गावहि, कोइ न मेटै भाई ।।3।।5।।22।। सिरी रागु महला 3)

नामदेव जाति से छीपा तथा कबीरा जुलाहा था, जिन्होंने गुरू के माध्यम से परमगति पाई थी। वे परमात्मा का सानिध्य पाने वाले बन गए तथा जाति–पाति से दूर हो गए। देवता मनुष्य सभी उनकी वाणी को गाते है तथा कोई उनको मिले सम्मान को नहीं मिटा सकता।

छीपे के घरि जनमु दैला गुर उपदेश भैला।

संतह कै परसादि नामा हरि भेटुला ।।2।।५।।486

नामदेवजी महाराज कहते हैं कि भगवान आप ने मुझे चाहे जैसे भी छीपे के घर जन्म दिया है परंतु आपकी कृपा से मुझे गुरू का उपदेश मिल गया तथा संतजनों की कृपा से मुझे श्री हरि विट्ठल भी मिल गये।

गोबिंद गोबिंद गोबिंद संगि, नामदेउ मनु लीणा ।।

आढ दाम को छीपरो होइओ लाखीणा ।।1।।2।। आसा महला 5)

गोविन्द का नाम जपने से भक्त नामदेव जी का मन सदा परमात्मा गोविन्द के साथ जुड़ा रहता था। जिसके कारण दौ कौड़ी (दाम या मूल्य) का गरीब छीपा मानो लखपति बन गया हो (क्योंकि उसे किसी की अधीनता नहीं रही)

नामदेअ प्रीति लई हरि सेती, लोकु छीपा कहै बुलाइ।।

खत्री ब्राहमण पिठि दे छोडे, हरि नामदेउ लीआ मुखि लाइ।।3।।1।।8।। (सूही महला 4)

है भाई! भक्त नामदेव की परमात्मा (श्री हरि) के साथ प्रीति बन गयी। संसार उसे 'छीपा' कह कर पुकारता था। परमात्मा ने क्षत्रियों–ब्राह्मणों को पीठ दे दी तथा नामदेव को मस्तक से लगाया था।

इससे सिद्ध होता है कि नामदेवजी वृहत छीपा समाज के ही हैं ।उनके अभंगों में छीपा ,दर्जी(सिंपी) रंगारा व भावसार आदि जातियों व उनके व्यवसायों (रंगाई ,छपाई ,सिलाई) का वर्णन हैं । उनके जन्म के बाद समाज ने 752 वर्ष की विकास यात्रा तय कर ली ।इसका सुखद परिणाम यह हुआ कि अब अधिकांश स्व–जाति समूह अपने आप को संत नामदेव से जोडने लग गए । ■■■■

5. नामदेव महाराज पूज्यनीय क्यों?

आज से 753 साल पहले भक्ति के क्षेत्र में अपनी सक्रिय और सार्थक उपस्थिति दर्ज कराने वाले संत शिरोमणि नामदेव महाराज वास्तव में सभी के लिए साष्टांग प्रमाण करने योग्य है।

सम्पूर्ण भारत का भक्ति साहित्य आध्यात्मिक लोकतंत्र का अनौपचारिक संविधान है। इस काम में नामदेव महाराज की भी अपनी एक भूमिका है। उनकी भूमिका को समझने के लिए काल को सामने रखना होगा। जो कुछ भक्तों और संतो ने बाद में रेखांकित किया, उसकी ओर उन्होंने बहुत पहले ही संकेत कर दिया था। मंदिर में प्रवेश से जुड़ी नामदेव महाराज की घटना इस बात का प्रमाण है कि हमारे समाज में पांखड, ऊंच–नीच और छुआ–छूत का रोग कितना पुराना है?

नामदेव माहराज छीपा/दर्जी थे। दर्जी के पट्टे पर कपड़ा इंचीटेप, कैंची, सुई और धागा होता है, और सामने वह व्यक्ति जिसके लिए वस्त्र तैयार होना है। इस सबको मिलाकर देखे और नामदेव महाराज की प्रांसगिकता पर विचार कीजिए–जीवन कपड़ा है, इंचीटेप जीवन मूल्य, कैंची संशोधन, सुई–धागा साधन। नामदेव अपने समय के समाज के जीवन कपड़े को देखा, जीवन मूल्यों के इंचीटेप से उसका माप लिया ताकि उसके योग्य वस्त्र बन सके। माप के अनुरूप कैंची से कटाई और सुई धागा तो वस्त्र निर्मिति के साधन है। छीपा के रूप में देखें तो सामने पाटिया जिस पर छापने के लिए कपड़ा बिछा है, बगल में साज जिसमें रंग भरा है, हाथ है, हाथ में बूंटी या लकड़ी का ठप्पा। साथ में कपड़े का थान नापने की गज, कपड़ा काटने की कैंची, रंगने व रंग बनाने की प्राकृतिक वनस्पतियाँ, बड़े कुंड़े व तामड़ी व छपाई प्रक्रिया में सहायक पंचमहाभूत तत्व जैसे आकाश, वायु, अग्नि, जल, तथा पृथ्वी। यहाँ भी जीवन कपड़ा है, गज जीवन मूल्य, कैंची संशोधन, रंग राम नाम/विट्ठल नाम, साज, बूंटी, वनस्पतियाँ, पंचमहाभूत वस्त्र छापने के साधन हैं।

नामदेव जी की समूची वाणी और समूचे जीवन कर्म का इस आधार पर अध्ययन करने की आवश्यकता है। हर वाणी में हर काम में नामदेव महाराज किसी न किसी रूप में एक महान धार्मिक, राष्ट्रीय सामाजिक दर्जी/छीपा के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते है।

लोहे की सुई और कपास का धागा एक दिन सोने की सुई और चांदी का धागा कैसे बन गया? नामदेव महाराज स्वयं इसका सूत्र बताते हैं – ''सुइने की सुई, रूपे का धागा/नामे का चित हरि सउ लागा।'' सूत्र है – मन में राम और हाथ से काम! मन और मुख में राम–भाव रखकर किये गये काम से जो कमाई होती है, वह नेक कमाई है। हक़ और हलाल!

नामदेव महाराज का संदेश–लाभ शुभ हो, लेकिन शुभ्र भी हो। मेहनत से कमाओ, संयम से खर्च करो और प्रेम से दान करो!

नामदेव जी की भक्ति अद्भुत है–निर्गुण कहूँ तो सगुण, और यदि सगुण कहूँ तो निर्गुण! उनकी भक्ति द्विआभा भक्ति है। सगुण–निर्गुण के ताने बाने से बनी चदरिया! नामदेव जी के निकट नाम की महिमा अद्भुत है – ''जौ बोलौ तौ रामहि राम'' सच यह है कि नामदेव महाराज के लिए राम ना रंगे छपे कपड़ों को धोने की शिला है।

नामदेव महाराज की एक पंक्ति हम हिंदू और मुसलमान दोनों के लिए ''हिंदू अंधा तुरकौ काना, दवौ ते ज्ञानी सयाना।''।

6. छीपा समाज से धर्मान्तरित मुस्लिम छीपा

भारत भूमि पर आक्रमण करने वाला प्रथम मुस्लिम आक्रांता मुहम्मद बिन कासिम था । वह अरब के खलीफा का नुमाइंदा था। वह 712 ईस्वी में भारत आया था। कासिम ने सिंध और पंजाब को जीतने के बाद यहाँ भारी लूटपाट की और निर्दोष हिन्दू लोगों का नरसंहार किया व धर्मांतरण किया । मुहम्मद बिन कासिम के सिंध के राजा दाहिर को पराजित करने के बाद 9वी 10वी शताब्दी में मुस्लिम समुदाय के संपर्क में आने तथा सूफी संतो से प्रभावित होकर कई हिन्दुओं ने इस्लाम स्वीकार किया। मोतीलाल बड़वा (भाट) के अनुसार 16 अप्रैल 1353 को दिल्ली सुल्तान फिरोज शाह तुगलक के समक्ष नागौर (राजस्थान)में 14 छीपा समाज के गोत्र वाले समाज बंधुओं (टांक ,मोलानी ,देवड़ा,चौहान ,भाटी आदि)ने सर्व प्रथम हिन्दू धर्म परिवर्तन कर इस्लाम धर्म स्वीकार किया तब से वे 16 अप्रैल को छीपा दिवस के रूप में मनाते हैं ।राजस्थान में मुस्लिम छीपा महासभा नाम की संस्था कार्यरत है ।अन्य प्रांतो में भी इसके संगठन हैं ।

अहमदाबाद व राजस्थान में रहने वाले मुस्लिम छीपा अपने पूर्वजो द्वारा 670 वर्ष पूर्व अपनाये गये ईस्लाम धर्म की स्मृतिवश आज भी छीपा दिवस मनाते हैं।

हिंदू भाट/बड़वा आज भी वर्षों से धर्मातरित मुस्लिम छीपाओं का परिवार रिकार्ड लिखते है। 16 अप्रैल 1353 को दिल्ली के सुल्तान फिरोजशाह तुगलक के सामने जब वह नागौर के पास कैंप लगा रहा था तो मोलानी छीपा समाज के एक बंधु टीलाजी सुल्तान से प्रभावित होकर 13 अन्य छीपा समाज के गौत्र वालों को प्रेरित कर सुल्तान के समक्ष ईस्लाम धर्म कबूल करवाया। मुस्लिम छीपाओं के चार हिंदू बड़वा/भाट हैं जिनमें मोतीलाल बड़वा प्रमुख है। अब मोतीलाल बड़वा था भी स्वर्गवास हो गया है उसके उत्तराधिकारी यह कार्य करते हैं। इनके पास 56000 पृष्ठों से भी अधिक सामग्री है। बड़वा पोथी के अनुसार 1353 से पूर्व सभी–छीपा हिंदू थे। दिल्ली सल्तनत पर जब फिरोजशाह तुगलक का शासन था तब हिंदू छीपाओं ने नागौर शरीफ में ईस्लाम स्वीकार किया। फिरोजशाह तुगलक का शासन 1351–1388 रहा। वह मुहम्मद तुगलक का चचेरा भाई था। उसकी मां नागौर जिले के एक छोटे से गांव की राजपूत थी जो दीपालपुर के राणामल की पुत्री थी और भाटी राजपूत थी। इसी आधार पर नागौर में छीपाओं का धर्मातंरण शायद आसान हुआ होगा।

मुस्लिम रंगरेज/नीलगर/लीलगर

धर्म परिवर्तन के कारण समाज के रंगारा छीपा रंगरेज/नीलगर/लीलगर बन गए ।

भारत प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश है।हमारे देश में नील की खेती होती थी । नील को ही अंग्रेजी में इंडिगो कहा जाता है।रंगारा छीपा समाज द्वारा नील के पौधों को काट

कर पानी की बडी होद में गलाया जाता था। पौधों के गल सड जाने के बाद होद में उतर कर हाथों से मथा जाता था, कचरा निकाल कर होद का पानी क्रमश:दूसरी तीसरी....होद में छोडकर पानी में घुली नील को नीचे बैठने/नितरने पर पानी को अगली होद में छोडा जाता था। नीचे नील के पौधों का सत मिलता उसे बट्टियों के रूप में सुखाकर नील तैयार की जाती थी,जो भारतीयो के कपडों की ही चमक नही पूरी दुनिया में भारत का नाम रोशन करने के साथ भारतीय जनता के खजाने में भी सोने की चमक बढाने का काम करती थी।चूंकि नील को अंग्रेजी में इंडिगो कहा जाता है। नील का व्यापार यूरोप के देशों से हमारे द्वारा किया जाता था। ।

छीपा समाज तथा विशेष रूप से रंगारा छीपा समाज द्वारा जंगल से फूल और कुछ जडी बुटियो से अन्य रंग (वानस्पतिक रंग) बनाया जाता था।मुगलकाल में बलात धर्म परिवर्तन के कारण रंगारा छीपा रंगरेज बन गए । रंगरेज शब्द फारसी भाषा का है ।हमारा नील और रंगों का व्यापार पूरी दुनिया में हुआ करता था।इरान, इराकऔर मिश्र में भी हमारा व्यापार होता था। वहां के लोगों के द्वारा ही रंगारा छीपा समाज को रंगरेज कहा जाता था जिसका अर्थ कपडे रंगने वाले से होता है।धर्म परिवर्तन के बाद उन्हे सब्बाग(नील की खेती करने वाले) भी कहा जाता है।

रंगारा छीपा रंगाई के साथ बंधेज का काम भी करते थे ।बंधेज में वे –1.चुनरी 2. मोठडा 3. पीलिया 4.पोमचा 5. मामापुरिया 6.घाट 7.लहरिया 8.पंतगिया आदि वस्त्रों को बंधेज के साथ रंगने(लूगडे, साडी, साफा, पगडी पर कई तरह के कच्चे–पक्के रंगना) का कार्य भी करते थे ।

उनके द्वारा बनाये गये सावन के महीने में लहरिया की तो बात ही निराली होती थी।लहरिया रंगते रंगते /सुखाते(हाथ में सुखाते) समय तो पानी की बरसात होने लगती थी। बसंत के मौसम में बसंती छाटना(कपडे को पीला रंग कर गहरे लाल/गुलाबी रंग के छीटे देकर बसंती कपडा) रंगा जाता था।धर्म परिवर्तन के बाद रंगरेज हमें (उनके पूर्वज) मुशरिक कह कर पुकारते थे । मुशरिक शब्द शिर्क से बना है । शिर्क का मतलब है साझीदार(शरिक) बनाना । जो अल्लाह के साथ किसी और को साझीदार बनाता है उसे 'मुशरिक' कहा जाता है ।शिर्क को इस्लाम मे सबसे बड़ा पाप कहा गया है।शिर्क मुख्यतः दो तरीके का होता है प्रथम – एक से ज्यादा अल्लाह/ ईश्वर/ गॉड मे विश्वास करना तथा द्वितीय अल्लाह के गुण(सिफत) में किसी और को साझीदार बनाना। मूर्तिपूजक अक्सर अल्लाह के गुण में किसी महापुरुष, जानवर, आकृति को साझीदार बना लेता है । उदाहरण के लिये कई मूर्तिपूजक अल्लाह के सिवा किसी और को धन देनेवाला, शक्ति देनेवाला, कण–कण मे समाया हुआ मान लेता है। जबकि सच्चाई यह है कि एक अल्लाह के सिवा कोई धन, शक्ति देनेवाला नही है और ना ही कोई हर जगह मौजूद है । यही कारण है कि मुशरिक शब्द का

अनुवाद कई बार 'मूर्तिपूजक' किया जाता है ।

मुसलमान होने के बाद से ही मुशरिको से अलग रीति रिवाज,शादी–विवाह,खानपान,रहन सहन,नामकरण, मौत , मय्यत, त्यौंहार , पहनावे आदि में परिवर्तन आता गया।

भारत की आजादी के समय बहेलियम रंगरेज समुदाय के बहुत से लोग दूसरे देशो में चले गए थे जो अब वहां पर मुहाजिरो में अग्रणी भूमिका अदा करते हैं।

राजस्थान के रंगरेजो में कुछ दावा करते हैं कि मुहम्मद गौरी के समय वे दिल्ली से राजस्थान में आए थे।रंगरेजो का एक गौत्र गौरी भी है।यहां राजस्थान में रंगरेज जयपुर, सीकर, सवाई माधोपुर और अलवर जिले में बहुतायत में पाए जाते हैं।

रंगरेज समुदाय के कई गोत्र है।गौरी चौहान,मंडवारिया, खोखर,भट्टी, बगाडिया,सिंघानिया, सोलंकी, आरबी ,बहेलियम आदि ।रंगरेज समुदाय मध्य एशिया में भी पाया जाता है।इसके अधिक तर लोग पूरे भारत में पाए जाते हैं।भारत की आजादी के बाद कुछ लोग पाकिस्तान में चले गए।वहां कराची में जाकर बसे है।खासतौर पर वहां मुहाजिर(पाकिस्तान में उन लोगों को मुहाजिर या मोहाजिर कहते हैं जो भारत के विभाजन के बाद वर्तमान भारत के किसी भाग से अपना घरबार छोड़कर वर्तमान पाकिस्तान के किसी भाग में आकर बस गये) में खास है। इसके अलावा बंगला देश और टर्की में भी रंगरेज पाए जाते हैं। भारत में दिल्ली, बिहार,राजस्थान,मध्य प्रदेश, गुजरात,महाराष्ट्रऔर दक्षिण भारत में भी रंगरेज– छीपा पाए जाते हैं।

7. एकता हेतु प्रयास

आज देश में उपर्युक्त सभी खांपो का अस्तित्व तो हैं परंतु रंगाई ,छपाई ,सिलाई ,बंधाई (बंधेज) कार्य समाज के बहुत कम बंधु करते हैं। हम अपने मूल कर्म को छोड़ कर अन्य कर्मों से जुड़ गए इसका अर्थ यह नहीं है कि ये सभी व्यवसाय बंद हो गए हैं ,हमारे मूल व्यवसाय आज भी प्रचलित है ।अन्य जातियों के लोग तकनीकी परिवर्तन के साथ उनको अपनाए हुये हैं तथा अच्छी आय अर्जित कर रहे हैं ।सभी समाज बंधु अपनी अपनी खाँप से प्रेम करते हैं तथा उसके विकास के प्रति चिंतित भी हैं ।अतः यदि सभी खांपे सर्वमान्य एजेंडे पर एक मंच पर आती है तो यह समाज राजनीतिक दृष्टि से भारत का सबसे मजबूत एवं सुदृढ़ समाज होगा। इसके लिए जरूरी यह है कि सभी खान्पे अपने अपने ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर एक स्थान पर विचार–विमर्श के लिए एकत्र हों तथा जिन आधारों पर एकजुटता हो सकती है उनका प्राथमिकता से निर्धारण करें । इस विषय पर शोध आगे बढ़े तथा सर्व समाज के कॉमन बिंदुओं पर कार्यवाही शुरू की जाए।अलग अलग स्त्रोतों से इन सभी खांपो से संबंधित साहित्य का संकलन किया जाए। ऐसी पुण्यमयी , कर्म–धर्म प्रधान जाति में उत्पन्न होना परम सौभाग्य, गौरव तथा सम्मान का विषय है। इस जाति को सामाजिक ,आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से ऊंचा उठाना हम सब का पुनीत कर्तव्य है

किसी दार्शनिक ने कहां हैं कि वह समाज जो अपने पूर्व इतिहास, अपनी उत्पत्ति व संसकृति से अनभिज्ञ है वह जड़ विहिन वृक्ष से ज्यादा कुछ नहीं हैं। आज में अपने समाज के इतिहास, अपने व्यवसाय व अपने संतों के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं है। परन्तु हम कब तक अज्ञानी बने रहेंगे। हमें निश्चित रूप से स्वयं को जागरूक होना होगा तथा समाज को भी निरंतर जाग्रत करते रहना होगा।

■■■■

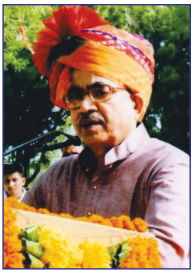

प्रो. मोहनलाल छीपा सांगानेर (जयपुर) के मूल निवासी हैं। उनकी स्कूल शिक्षा सांगानेर में तथा उच्च शिक्षा राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से हुई हैं। उन्होंने 1972 से 1995 तक राजस्थान विश्वविद्यालय में तथा 1995 से 2010 तक महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर में शिक्षक के रूप में अपनी सेवाऐं दी हैं। वह 2004–2007 तक महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर में तथा 2012 से 2017 तक अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल में कुलपति रहे हैं। समाज सेवा में उनकी विद्यार्थी जीवन से ही रूचि रही हैं। अखिल भारतीय छीपा महासभा की गतिविधियों में वह विद्यार्थी जीवन से ही जुड़े रहे। उन्होंने समाज में जनगणना कार्य को आरंभ करने में रूचि ली। वर्तमान में वह अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष है। उन्होंने इंग्लैड, अमेरिका, नोर्वे, मोरिशस, दक्षिण अफ्रिका, जर्मनी, फ्रांस, डेनमार्क आदि देशों की यात्राएँ की। प्रो. छीपा ने अमेरिका एवं कनाडा के समाज बन्धुओं से परिचय कर वहां सामाजिक गतिविधियाँ प्रारंभ की।

संत शिरोमणी श्री नामदेव जी महाराज

सौजन्य : बाबा सिनेमाज्, नवी मुम्बई

अखिल भारतीय श्री नामदेव छीपा महासभा समिति
अखिल भारतीय नामदेव टांक क्षत्रिय महासभा